



INFUSION NOTES
WHEN ONLY THE BEST WILL DO

UPSC – CSE

(संघ लोक सेवा आयोग)

(हिंदी माध्यम)

प्रारंभिक और मुख्य परीक्षा हेतु



भाग - 6

राजव्यवस्था + संविधान एवं शासन

प्रस्तावना

प्रिय पाठकों, प्रस्तुत नोट्स “UPSC-CSE (IAS/IPS/IFS) (हिंदी माध्यम)” को एक विभिन्न अपने अपने विषयों में निपुण अध्यापकों एवं सहकर्मियों की टीम के द्वारा तैयार किया गया है / ये नोट्स पाठकों को संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित करायी जाने वाली परीक्षा “सिविल सेवा परीक्षा (प्रारंभिक एवं मुख्य)” में पूर्ण संभव मदद करेंगे /

अंततः सतर्क प्रयासों के बावजूद नोट्स में कुछ कमियों तथा त्रुटियों के रहने की संभावना हो सकती है / अतः आप सूचि पाठकों का सुझाव सादर आमंत्रित हैं

प्रकाशक:

INFUSION NOTES

जयपुर, 302029 (RAJASTHAN)

मो : 9887809083

ईमेल : contact@infusionnotes.com

वेबसाइट : <http://www.infusionnotes.com>

WhatsApp कीलिए - <https://wa.link/6bx90g>

Online Order कीलिए - <https://shorturl.at/5gSVX>

मूल्य : ₹

संस्करण : नवीनतम

भारतीय राजनीति

क्र. सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	भारतीय संविधान • ब्रिटिश संविधान • मुख्य विशेषताएं • ब्रिटिश और भारतीय प्रधान मंत्री के बीच अंतर • प्रिवी काउंसिल • हाउस ऑफ लॉर्ड्स • यूके में संवैधानिक प्रणाली • संविधान: क्यों और कैसे • 1773 का विनियमन अधिनियम • 1784 का पिट्स इंडिया एक्ट • 1813 का चार्टर अधिनियम • 1833 का चार्टर अधिनियम • 1853 का चार्टर अधिनियम • भारत सरकार अधिनियम 1858 • भारतीय परिषद अधिनियम 1861 • भारत परिषद अधिनियम 1892 • भारतीय परिषद अधिनियम 1909 • भारत सरकार अधिनियम 1919 • भारत सरकार अधिनियम 1935 • भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947	1
2.	संविधान निर्माण • भारतीय संविधान कैसे बना • संविधान सभा • संविधान के विभिन्न स्रोत • भारतीय संविधान की अनुसूचियाँ • भारत के संविधान की प्रस्तावना • भारतीय संविधान के उद्देश्य	12
3.	संघ और इसके क्षेत्र • संघ और उसका क्षेत्र: भाग 1 (अनुच्छेद 1-4) • भारतीय राज्य और उनकी राजधानियाँ • राज्यों और केंद्र शासित प्रदेश	20
4.	भारत की नागरिकता	24
5.	मौलिक अधिकार	30

	• अनुच्छेद 12 - 35 • सप्रू समिति 1945 • साधारण अधिकार • मौलिक अधिकारों की विशेषताएं • रिट एवं इसके प्रकार	
6.	जम्मू और कश्मीर • जम्मू और कश्मीर अनुच्छेद 35 • अनुच्छेद 370 • अनुच्छेद 35A	47
7.	राज्य नीति के निदेशात्मक सिद्धांत (DPSP) • DPSP + मौलिक अधिकार • DPSP का प्रभाव	55
8.	मूल कर्तव्य - (अनुच्छेद 51 A) • स्वर्ण सिंह समिति • अनुच्छेद 51 A • मौलिक कर्तव्यों की विशेषताएं • मौलिक कर्तव्यों की आलोचना • मौलिक कर्तव्यों का महत्व • वर्मा समिति का अवलोकन • मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्यों के बीच संबंध	62
9.	भारत के राष्ट्रपति • परिचय • भारत के राष्ट्रपति से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी • भारत के राष्ट्रपति की शक्तियाँ	64
10.	भारत के उपराष्ट्रपति (अनुच्छेद 63-73) • परिचय • अनुच्छेद 63 से 73 तक • भारत के उपराष्ट्रपति की शक्तियाँ	69
11.	प्रधानमंत्री, मंत्रिपरिषद् और महान्यायवादी • मंत्रिपरिषद् • भारत के महान्यायवादी • मंत्रिपरिषद्, प्रधानमंत्री और महान्यायवादी से संबंधित जानकारी	73
12.	भारत की संसद • संसद का गठन	74

	• संसद के सत्र, सत्रावसान और विघटन • राष्ट्रपति द्वारा विशेष अभिभाषण • सदनों के संबंध में मंत्रियों और महान्यायवादी के अधिकार • एंग्लो-इंडियन समुदाय • राज्यों को लोक सभा सीटों का आवंटन • सांसदों के अधिकार, कार्य संचालन और अयोग्यता (अनुच्छेद 84-106/122) • संसद के अधिकारी • राज्य सभा के सभापति और उपसभापति • लोक सभा के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सदस्य	
13.	संसद में प्रक्रियाएँ • विधायी प्रक्रिया • वित्तीय मामलों में प्रक्रिया • सामान्य प्रक्रिया • सर्वोच्च न्यायालय (अनुच्छेद 124-147)	85
14.	भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (CAG) • भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक • नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के कर्तव्य और शक्तियाँ	98
15.	राज्यपाल • राज्यों के राज्यपाल (अनुच्छेद 152-162) • कार्यकारी - राज्यपाल • राज्यों के राज्यपाल की शक्तियाँ • राज्य विधानमंडल	99
16.	भारतीय संसद के सत्र • बजट सत्र (फरवरी से मई) • मानसून सत्र (जुलाई से सितंबर) • शीतकालीन सत्र (नवंबर से दिसंबर) • संसद का संयुक्त सत्र • सत्रावसान • विघटन • स्थगन • गणपूर्ति • प्रश्नकाल • शून्यकाल • संसद में प्रस्ताव	105

	• व्यवस्था का प्रश्न • विशेष उल्लेख	
17.	भारत में संसदीय प्रक्रियाएँ • व्यक्तिगत सदस्य का बिल • साधारण बिल • सामान्य चर्चा का चरण • दूसरे सदन में बिल • मनी बिल • वित्तीय बिल • संशोधन के प्रकार और संविधान संशोधन प्रक्रिया • संसदीय समितियाँ	112
18.	भारतीय संविधान में महत्वपूर्ण संशोधन • संशोधन • संविधान की मूल संरचना • शंकरा प्रसाद मामला 1951 • गोलक नाथ मामला 1967 • केशवानंद भारती मामला • मिन्हा मिन्हा मामला 1980 • वामन राव मामला 1981 • इंदु साहनी और भारत संघ 1982 • एस.आर. बोम्मई मामला 1994 • केंद्र राज्य संबंध • लोक सेवा आयोग • एकीकृत न्यायिक प्रणाली • आपातकाल के दौरान संबंध • संविधान में 101 वां संशोधन • राज्य सूची • मौजूदा लेखों में अन्य महत्वपूर्ण संशोधन • गैर-कर राजस्व का वितरण • राज्यों को सहायता अनुदान • वित्त आयोग (अनुच्छेद 280) • अंतरसरकारी कर प्रतिरक्षा • आपातकाल के प्रभाव • केंद्र-राज्य संबंधों में तनावपूर्ण क्षेत्र • प्रशासनिक सुधार आयोग - एआरसी	125
19.	अंतर राज्य संबंध	145

	- परिचय - अंतर-राज्य जल विवाद - अंतर-राज्य नदी जल विवाद (संशोधन) विधेयक 2019 - अंतर-राज्य परिषद - सरकारिया आयोग - क्षेत्रीय परिषदें - उत्तर-पूर्वी परिषद	
20.	भारतीय संविधान में आपातकालीन प्रावधान - आपातकालीन प्रावधान - आपातकाल के प्रकार - राष्ट्रीय आपातकाल - राज्य आपातकाल - वित्तीय आपातकाल	149
21.	भारत की महत्वपूर्ण जनजातियाँ - जनजातीय मामलों का मंत्रालय - राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग - जनजातीय उप योजना (टीएसपी) रणनीति - विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह (पीवीटीजी) - पीवीटीजी के विकास के लिए योजना	152
22.	स्वायत्त जिला परिषद (छठा अनुच्छेद) भारत में स्थानीय स्वशासन का विकास	163
23.	समान नागरिक संहिता (UCC): संक्षेप में फायदे और नुकसान	168
24.	बजट - वार्षिक वित्तीय विवरण - बजट की मुख्य बातें - बजट बयानों के साथ अन्य दस्तावेज	170
25.	मूल ढांचा सिद्धांत	173
26.	न्यायिक समीक्षा बनाम न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक अतिक्रमण - न्यायिक समीक्षा - न्यायिक सक्रियता - न्यायिक अत्यधिक हस्तक्षेप	175
27.	एक मौलिक अधिकार के रूप में निजता का अधिकार - निजता को मौलिक अधिकार घोषित करने के लिए याचिका - आधार लिंकिंग की आलोचनाएं - केंद्र का आधार लिंकिंग पर रुख - निजता के अधिकार के फैसले का महत्व	176
28.	ग्राम न्यायालय: भारत में ग्राम अदालतें परिचय	177
29.	मूल अधिकार बनाम राज्य के नीति निर्देशक तत्व	179

30.	ट्रांसजेंडर अधिकार	181
31.	भारत में मानहानि	184
32.	नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 - आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग (EWS) के लिए आरक्षण - सबरीमाला मंदिर मुद्दा	186
33.	भारत में संवैधानिक, गैर-संवैधानिक संस्थाएँ	198
34.	राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (NCM)	205
35.	जनप्रतिनिधित्व / लोकतंत्र प्रतिनिधित्व अधिनियम - सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 - महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा से सुरक्षा अधिनियम 2005 - विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार नीति - भारतीय कंपनियाँ अधिनियम 2013 - दलबदल विरोधी कानून - FRBM अधिनियम - दिशानिर्देश, लक्ष्य, और निकासी खंड - राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (NSA)	208

शासन

क्र. सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	सरकारी योजनाएँ और कार्यान्वयन - शासन क्या है? - शासन के हितधारक - शासन की विशेषताएँ - सुशासन - सुशासन के लिए रणनीतियाँ	219
2.	लोकतंत्र में सिविल सेवाओं की भूमिका - सिविल सेवाओं का ऐतिहासिक विकास - सिविल सेवाओं का महत्व - सिविल सेवाओं के कार्य - सिविल सेवाओं से संबंधित संवैधानिक प्रावधान - एक सिविल सेवक की जवाबदेही - सिविल सेवाओं को प्रभावित करने वाली समस्याएँ - भारत में लोकतंत्र के बारे में मुख्य तथ्य - आईएएस अधिकारी के कार्य - भारतीय प्रशासनिक सेवा का इतिहास - अखिल भारतीय सेवाएँ	226
3.	भारत में पुलिस सुधार - टी.पी. शंकरम मामले के संदर्भ में - पुलिस सुधार - संसदीय लोकतंत्र में पुलिस की भूमिका - ए.एच.एल फ्रेजर आयोग	236

4.	संवेदनशील वर्गों के लिए तंत्र, कानून, संस्थाएँ और निकाय	239
5.	जल्लीकटू: इतिहास, अदालती फैसले और विवाद	243
6.	भारत में चिकित्सा शिक्षा की समस्याएँ	246
7.	राईट टू रिकॉल	250
8.	इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें (EVM)	252
9.	सुशासन - परिचय, परिभाषा और विशेषताएँ • परिचय • ई-गवर्नेंस और इसका महत्व	256
10.	विकास के लिए सरकारी नीतियाँ और हस्तक्षेप • विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए नीतियाँ और हस्तक्षेप • सामाजिक क्षेत्र में प्रमुख सरकारी हस्तक्षेप • स्वास्थ्य क्षेत्र में सरकारी हस्तक्षेप • सर्व शिक्षा अभियान की मुख्य विशेषताएँ • ग्रामीण विकास के तहत सरकारी कार्यक्रम • सामाजिक सुरक्षा की आकस्मिकताएँ	261
11.	भारतीय संविधान में रिट • भारत में रिट के प्रकार ○ बंदी प्रत्यक्षीकरण ○ परमादेश ○ प्रतिषेध ○ उत्प्रेषण ○ अधिकार पृच्छा • भारत में रिट के बारे में सामान्य तथ्य	274
12.	IPC की धारा 377 का गैर-अपराधीकरण	276
13.	महत्वपूर्ण विधेयक / कानून • आवश्यक वस्तु अधिनियम • शस्त्र (संशोधन) अधिनियम, 2019 • मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019 • नीति निगरानी : राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग विधेयक • लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम • ट्रिपल तलाक बिल • सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 • जनप्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA) • श्रम कानून और लॉकडाउन के बीच हालिया बदलाव • भारत में श्रम कानून • कावेरी जल विवाद • पूंजीगत सज़ा, दया याचिकाएँ और सर्वोच्च न्यायालय • विशेष अनुमति याचिका बनाम समीक्षा याचिका बनाम उपचारात्मक याचिका बनाम दया याचिकाएँ	278

भारतीय राजनीति

अध्याय - I

तुलना

भारतीय संविधान अन्य देशों के संविधान से तुलना दो मुख्य बिंदुओं के इर्द-गिर्द केंद्रित है :

1. विभिन्न देशों के संविधान का संक्षिप्त ज्ञान, जो भारतीय संविधान की वर्तमान स्थिति के कारण महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह स्पष्ट या अप्रत्यक्ष रूप से इनसे प्रभावित होता है।
2. संविधान की विशेषताओं (जैसे मूल अधिकार, DPSP, संघवाद आदि) के संदर्भ में की जाती है।

ब्रिटिश संविधान - महत्वपूर्ण विशेषताएँ

अलिखित (Unwritten)

ब्रिटिश संविधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसका अलिखित (Unwritten) होना है। ब्रिटिश संविधान का कोई संहिताबद्ध या संरचित दस्तावेज़ नहीं है, जैसा कि भारत में है, जहाँ संविधान को विभिन्न भागों और अनुबंधों में संहिताबद्ध किया गया है। फिर भी, संविधानिक कानून के कई स्रोत लिखित होते हैं, और ये प्रथा और राजनीतिक परंपरा के साथ मिलकर ब्रिटिश संविधान का निर्माण करते हैं। इसके विपरीत, भारतीय संविधान दुनिया का सबसे लंबा लिखित संविधान है।

विकासात्मक (Evolutionary)

ब्रिटिश संविधान एक विकासात्मक संविधान है। इसे कभी भी किसी संविधान सभा द्वारा नहीं तैयार किया गया। इसका विकास हजारों वर्षों की निरंतरता में हुआ है। कहा जाता है कि ब्रिटिश संविधान बुद्धिमत्ता और संयोग का उत्पाद है। भारतीय संविधान इस पहलू में कुछ समानताएँ और अंतर रखता है। यह ब्रिटिश संविधान से इस हद तक भिन्न है कि यह एक लिखित दस्तावेज़ है और इसमें स्पष्ट प्रावधान हैं। हालांकि, यह भी विकास के लिए खुला है, क्योंकि संशोधन का प्रावधान रखा गया है। इससे संविधान को समय की आवश्यकताओं और संवेदनाओं के अनुसार विकसित होने की अनुमति मिलती है।

लचीलापन (Flexibility):

ब्रिटिश संविधान लचीले संविधान का एक आदर्श उदाहरण है। इसे संसद के साधारण बहुमत (वर्तमान और मतदान करने वाले सदस्य का 50%) द्वारा पारित, संशोधित और निरस्त किया जा सकता है, क्योंकि संविधानिक कानून और सामान्य कानून के बीच कोई भेद नहीं किया जाता।

संविधानिक कानून और सामान्य कानून को समान रूप से माना जाता है। लचीलापन का यह तत्व ब्रिटिश संविधान को अनुकूलनशील और समायोजनीय बना देता है। इस गुण ने इसे समय की आवश्यकताओं के साथ विकसित होने में सक्षम बनाया है। इसके विपरीत, भारतीय संविधान दोनों लचीला और कठोर है। यह भारतीय संविधान के मूल विचारधारा के साथ पूरी तरह से मेल खाता है, जिसमें कुछ विशेषताएँ जैसे संप्रभुता, धर्मनिरपेक्षता, गणराज्य आदि हैं और इनमें संविधान संशोधन किया जा सकता है।

एकात्मक बनाम संघीय विशेषताएँ:

ब्रिटिश संविधान में **एकात्मक (Unitary)** है, जबकि भारतीय संविधान **संघीय (Federal)** है। ब्रिटिश संविधान में सरकार की सभी शक्तियाँ ब्रिटिश संसद में निहित होती हैं, जो एक संप्रभु निकाय है। राज्य के कार्यकारी अंग संसद के अधीन होते हैं, और ये सौंपे गए अधिकारों का प्रयोग करते हैं तथा इसके प्रति उत्तरदायी होते हैं। यहां केवल एक विधायिका होती है। इंग्लैंड, स्कॉटलैंड, वेल्स आदि प्रशासनिक इकाइयाँ हैं, जो राजनीतिक रूप से स्वायत्त इकाइयाँ नहीं हैं।

वहीं भारतीय संविधान संघीय है।

एकात्मक	संघीय	परिसंघ
शक्ति और सरकार सारी शक्ति केंद्र के पास होती है।	राष्ट्रीय और राज्य सरकार द्वारा साझा की जाती है।	इकाइयाँ एक साथ आती हैं और राज्य बनाती हैं। यह एकात्मक प्रणाली के विपरीत है।
केंद्र प्रांतीय सरकार को शक्ति प्रत्यायोजित करता है।	प्रांतीय सरकार के लिए शक्ति संविधान से आती है।	वास्तविक शक्ति इकाइयों के पास होती है।
उदाहरण: ब्रिटेन	उदाहरण: भारत	उदाहरण: यूरोपीय संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका

संसदीय कार्यपालिका:

यह ब्रिटिश और भारतीय संविधान के बीच एक महत्वपूर्ण समानता है। ब्रिटेन में सरकार का संसदीय स्वरूप है। राजा, जो संप्रभु है, को उसकी सभी शक्तियों और अधिकार से वंचित कर दिया गया है। वास्तविक पदाधिकारी मंत्री होते हैं, जो संसद में बहुमत दल के होते हैं और तब तक पद पर बने रहते हैं जब तक वे इसका विश्वास बनाए रखते हैं।

प्रधान मंत्री और उनके मंत्री अपने कार्यों और नीतियों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी होते हैं। संसदीय प्रणाली कार्यकारी और विधायी अंगों के बीच सहयोग और सहकारिता के सिद्धांत पर आधारित है। ब्रिटेन में कार्यपालिका की व्यक्तिगत कानूनी जिम्मेदारी होती है जबकि भारत में कोई कानूनी जिम्मेदारी नहीं होती है।

संसद की संप्रभुता:

संप्रभुता (Sovereignty) शब्द का अर्थ सर्वोच्च शक्ति है। ब्रिटिश संविधान की एक बहुत ही महत्वपूर्ण विशेषता ब्रिटिश संसद की संप्रभुता है (एक लिखित संविधान अनुपस्थित होने के कारण)। ब्रिटिश संसद देश का एकमात्र विधायी निकाय है जिसके पास विधान की अबाधित शक्ति है। यह किसी भी कानून को बना, संशोधित या निरस्त कर सकती है। हालाँकि भारत के मामले में, हमारे पास राज्य स्तर पर भी विधायिका है, फिर भी भारतीय संसद की कानून बनाने की शक्ति मोटे तौर पर ब्रिटिश संसद के समान है।

अदालतों के पास ब्रिटिश संसद द्वारा पारित कानूनों की वैधता पर सवाल उठाने की कोई शक्ति नहीं है। ब्रिटिश संसद देश के एक साधारण कानून की तरह, अपने अधिकार पर संविधान में संशोधन कर सकती है। यह गैरकानूनी को कानूनी और कानूनी को गैरकानूनी बना सकती है। यहाँ, बनाए गए कानून की वैधता पर नजर रखने के लिए भारतीय न्यायपालिका की शक्ति के संबंध में एक स्पष्ट अंतर है। साथ ही, 'मूल संरचना सिद्धांत', भारतीय न्यायपालिका को इस तथ्य के आलोक में कानून की वैधता पर सवाल उठाने की और शक्ति प्रदान करता है कि भारत का सर्वोच्च न्यायालय भारत के संविधान का सर्वोच्च व्याख्याकार है।

परंपराओं का भूमिका:

परंपराएँ संविधान के **अप्रकट सिद्धांत (नियम)** मानी जाती हैं। ये लचीलापन प्रदान करती हैं और संशोधनों की आवश्यकता को कम करती हैं। विश्व के अधिकांश संविधानों में परंपराएँ होती हैं। ब्रिटिश संविधान के अप्रकट स्वभाव का एक आवश्यक परिणाम यह है कि परंपराएँ ब्रिटिश राजनीतिक प्रणाली में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उदाहरण के लिए, जबकि महारानी के पास ब्रिटिश संसद द्वारा पारित किसी विधेयक को स्वीकृति देने से इनकार करने का विशेषाधिकार है, लेकिन परंपरा के अनुसार, वह ऐसा नहीं करती और यह स्वयं संविधान का एक सिद्धांत बन गया है। हालाँकि, परंपराओं की कानूनी स्थिति लिखित कानून के अधीन होती है। भारत में भी परंपराएँ संसद के कार्यकलापों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उदाहरण के लिए: भारत में उपाध्यक्ष का पद विपक्षी पार्टियों को साँपा जाता है, आदि।

कानून का शासन:

ब्रिटिश संविधान की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है **कानून का शासन (Rule of Law)**। संविधानवाद या सीमित सरकार, कानून के शासन का सार है। यह कार्यपालिका द्वारा मनमानी कार्रवाई पर रोक लगाता है। डाइसि के अनुसार, ब्रिटेन में कानून के शासन के तीन सिद्धांत होते हैं:

- **मनमानी गिरफ्तारी से सुरक्षा और आत्मरक्षा का अवसर।**
- **कानून के समक्ष समानता**, जिसका मतलब है कि सभी व्यक्ति कानून के समक्ष समान होते हैं, चाहे उनका पद या रैंक कुछ भी हो। यह प्रशासनिक कानून की अवधारणा से अलग है, जो सार्वजनिक कर्मचारियों को विभिन्न प्रकार की छूट देता है। ब्रिटेन में संविधान और मौलिक अधिकारों के अभाव में, न्यायपालिका इस कानून की रक्षा करती है। इसलिए इसे सामान्य कानून का सिद्धांत कहा जाता है। भारत में मेनका गांधी बनाम **यूनियन ऑफ इंडिया (1978)** मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अनुच्छेद 21 के अंतर्गत 'कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया' सही, न्यायपूर्ण और निष्पक्ष होनी चाहिए और यह मनमानी, काल्पनिक या उत्पीड़नपूर्ण नहीं होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता, तो यह प्रक्रिया बिल्कुल भी नहीं होगी और अनुच्छेद 21 की आवश्यकता पूरी नहीं होगी। इस प्रकार, भारत में '**कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया**' की वही महत्वता है जो अमेरिका में 'कानूनी प्रक्रिया' के प्रावधान की है।
- **ब्रिटेन में लोगों के अधिकारों की रक्षा न्यायपालिका द्वारा की जाती है।** न्यायपालिका सामान्य कानूनों को मान्यता देती है। इस प्रकार, ब्रिटेन में लोग अधिकारों का आनंद लेते हैं, यहां तक कि अधिकारों के बिल या मौलिक अधिकारों के अभाव में भी। ब्रिटिश संविधान में संविधान उन व्यक्तिगत अधिकारों का परिणाम है जिन्हें न्यायालयों द्वारा संरक्षित किया जाता है, जबकि भारत में संविधान व्यक्तिगत अधिकारों का स्रोत है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता:

ब्रिटेन में कानून के शासन की रक्षा इस प्रावधान द्वारा की जाती है कि न्यायाधीशों को गंभीर कदाचार के लिए ही पद से हटाया जा सकता है, और इसे हटाने की प्रक्रिया ऐसी होती है जिसके लिए दोनों सदनों की संसद की सहमति आवश्यक होती है। इसलिए, न्यायाधीश बिना किसी डर या पक्षपाती के अपने निर्णय दे सकते हैं। भारत में भी यह प्रथा अपनाई गई है, जहाँ न्यायपालिका की स्वतंत्रता को संविधान का एक अमिट हिस्सा माना जाता है (जो 'मूल संरचना' सिद्धांत का एक हिस्सा है)।

राज्य के अंग - कार्यपालिका

ब्रिटेन में कार्यपालिका को क्राउन कहा जाता है। पहले क्राउन का प्रतीक राजा था। अब, राजा भी क्राउन का हिस्सा है।

क्राउन, एक संस्था के रूप में, निम्नलिखित से मिलकर बनती है:

- राजा
- प्रधानमंत्री
- मंत्रिमंडल
- स्थायी कार्यपालिका, सिविल सेवक
- प्रिवी काउंसिल

क्राउन: - "राजा मर गया। राजा चिरंजीवी रहे।"

ब्रिटेन में, शुरू में सारी शक्ति राजा के पास थी। बाद में, शक्ति राजा की संस्था से प्रधानमंत्री, स्थायी कार्यपालिका और प्रिवी काउंसिल आदि के नेतृत्व वाली मंत्रिपरिषद की संस्था में स्थानांतरित हो गई। आज, क्राउन में ये सभी संस्थाएँ शामिल हैं। इसलिए, कथन का पहला भाग राजा का एक व्यक्ति के रूप में वर्णन करता है, जबकि दूसरा भाग राजा या क्राउन का एक संस्था के रूप में वर्णन करता है।

राजशाही की प्रकृति:

ब्रिटेन में एक संवैधानिक राजशाही है जो लोकतंत्र के साथ असंगत नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि अनिवार्य रूप से राज्य के प्रमुख के रूप में सम्राट की शक्तियाँ, वर्तमान में महारानी एलिजाबेथ, औपचारिक हैं। सबसे महत्वपूर्ण व्यावहारिक शक्ति सरकार बनाने के लिए संसद सदस्य का चुनाव है, लेकिन हमेशा सम्राट इस परंपरा का पालन करता है कि यह अवसर उस राजनीतिक दल या गठबंधन के नेता को दिया जाता है जिसके पास हाउस ऑफ कॉमन्स में बहुमत है।

अपनी वास्तविक शक्ति की कमी के बावजूद, राजशाही की समकालीन ब्रिटेन में अभी भी कई महत्वपूर्ण भूमिकाएँ हैं। इनमें शामिल हैं:

- देश और विदेश में यूके का प्रतिनिधित्व करना,
- नागरिकता और पारिवारिक जीवन के मानक स्थापित करना,
- मतभेदों के बावजूद लोगों को एकजुट करना,
- सशस्त्र बलों के प्रति निष्ठा,
- ब्रिटिश परंपराओं की निरंतरता बनाए रखना,
- ईसाई नैतिकता को बनाए रखना आदि।

इसके अलावा, निम्नलिखित पर विचार करें:

संसदीय प्रणाली को दो प्रमुखों की आवश्यकता होती है:

- पहला प्रमुख, राज्य का प्रमुख होता है। वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है और प्रशासन को निरंतरता प्रदान करता है।
- दूसरा प्रमुख सरकार का प्रमुख होता है। उसके पास वास्तविक शक्तियाँ होती हैं क्योंकि सदन को प्रधानमंत्री पर विश्वास होता है। प्रधानमंत्री सदन के नेता होते हैं। वे सदन के बहुमत का प्रतिनिधित्व करते हैं। राजत्व की संस्था मनोवैज्ञानिक संतुष्टि का स्रोत है। ऐसा कहा जाता है कि **"बकिंगहम पैलेस में राजा के साथ, अंग्रेज अपने घरों में शांति से सोते हैं"**। राजा महत्वपूर्ण समय में बहुत मददगार होता है। उनके पास आमतौर पर बहुत लंबा अनुभव होता है और वे देश के हित में बहुमूल्य सलाह दे सकते हैं। बेजहॉट के अनुसार, राजा के तीन अधिकार हैं:
 - चेतावनी देने का अधिकार,
 - प्रोत्साहित करने का अधिकार,
 - सूचना देने का अधिकार।

राजत्व को समाप्त करने के लिए एक निर्वाचित प्रमुख की आवश्यकता होगी। बिना वास्तविक शक्तियों वाले एक निर्वाचित प्रमुख की अपनी समस्याएँ होंगी। इसके विपरीत, भारतीय संविधान के मामले में राजशाही का कोई प्रावधान मौजूद नहीं है। वास्तव में, राजा आदि जैसे पद धारण करना मौलिक अधिकारों के **अनुच्छेद 18** के अनुसार निषिद्ध है, इस प्रकार सभी भारतीय नागरिकों की समानता पर जोर दिया गया है।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद:

ब्रिटेन में कैबिनेट प्रकार की सरकार है। एक कैबिनेट सरकार का बहुवचन या सामूहिक रूप है। शक्ति एक व्यक्ति में नहीं, बल्कि पूरे मंत्रिपरिषद में निहित होती है। सिद्धांत यह है कि, "सभी मंत्री एक साथ डूबते और तैरते हैं"। यह निचले सदन के प्रति सामूहिक जिम्मेदारी पर आधारित है। कैबिनेट की उत्पत्ति राजा को सलाह देने के लिए स्थापित प्रिवी काउंसिल में हुई है। कैबिनेट की भूमिकाओं में निम्नलिखित शामिल हैं:

- नीति को मंजूरी देना (प्रमुख नीति निर्धारण निकाय)।
- विवादों का समाधान करना,
- प्रधानमंत्री को नियंत्रित करना,
- सरकार को एकजुट करना,
- संसदीय दल को एकजुट करना आदि।

इसके अलावा, कैबिनेट संसदीय प्रणाली में कानून बनाने का अंतिम निकाय है। यह उस दल/समूह से बना है, जो सदन में बहुमत का आनंद लेता है। कैबिनेट की बैठकें निजी तौर पर आयोजित की जाती हैं।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री:

● **इतिहास और विकास** - भारतीय संविधान के ऐतिहासिक आधार और विकास को स्वतंत्रता से पहले पारित कई विनियमों और अधिनियमों में देखा जा सकता है।

भारतीय प्रशासनिक प्रणाली:

भारत एक **संसदीय लोकतंत्र (Parliamentary Democracy)** है, जिसमें कार्यपालिका संसद के प्रति उत्तरदायी होती है। संसद में दो सदन होते हैं - लोकसभा और राज्यसभा। साथ ही, भारत में शासन की प्रणाली संघीय (Federal) है, अर्थात् केंद्र और राज्यों में अलग-अलग कार्यपालिका और विधायिका होती है। इसके अलावा, स्थानीय स्तर पर **स्व-शासन (Self-Governance)** की व्यवस्था भी है। यह सभी प्रणालियाँ ब्रिटिश प्रशासन की विरासत हैं। आइए भारतीय संविधान के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उसके विकास को समझें।

1773 का रेगुलेटिंग एक्ट (Regulating Act of 1773):

- **ब्रिटिश संसद का पहला कदम** - भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के मामलों को नियंत्रित और विनियमित (Regulate) करने के लिए यह पहला कदम उठाया गया।
- **बंगाल के गवर्नर का पद** - बंगाल (फोर्ट विलियम) के गवर्नर को **गवर्नर-जनरल (बंगाल के)** के रूप में नामित किया गया। **वॉरेन हेस्टिंग्स** पहले गवर्नर-जनरल बने।
- **कार्यकारी परिषद** - गवर्नर-जनरल की एक कार्यकारी परिषद (Executive Council) स्थापित की गई, जिसमें चार सदस्य थे। कोई अलग विधायी परिषद (Legislative Council) नहीं थी।
- **बॉम्बे और मद्रास के गवर्नर** - बॉम्बे और मद्रास के गवर्नरों को बंगाल के गवर्नर-जनरल के अधीन कर दिया गया।
- **सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court)** - 1774 में फोर्ट विलियम (कलकत्ता) में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई।
- **कंपनी के सेवकों पर प्रतिबंध** - कंपनी के सेवकों को निजी व्यापार करने या स्थानीय लोगों से रिश्तत लेने पर प्रतिबंध लगाया गया।
- **राजस्व रिपोर्टिंग** - **कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स** (कंपनी की शासी निकाय) को अपने राजस्व की रिपोर्ट देनी होती थी।

1784 का पिट्स इंडिया एक्ट (Pitt's India Act of 1784):

- **वाणिज्यिक और राजनीतिक कार्यों का पृथक्करण** - इस एक्ट ने कंपनी के वाणिज्यिक (Commercial) और राजनीतिक (Political) कार्यों को अलग किया।

- **प्रमुख संस्थाएं** - वाणिज्यिक कार्यों के लिए **कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स** और राजनीतिक मामलों के लिए **बोर्ड ऑफ कंट्रोल**।
- **गवर्नर-जनरल की परिषद** - गवर्नर-जनरल की परिषद की संख्या घटाकर तीन सदस्य कर दी गई।
- **ब्रिटिश सरकार का नियंत्रण** - भारतीय मामलों को सीधे ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण में रखा गया।
- **भारतीय क्षेत्र** - कंपनी के भारतीय क्षेत्रों को **"ब्रिटिश भारत का अधिपत्य (British Possession in India)"** कहा गया।
- **मद्रास और बॉम्बे में परिषदें** - मद्रास और बॉम्बे में गवर्नर की परिषदें स्थापित की गईं।
- **1813 का चार्टर अधिनियम** - भारतीय व्यापार पर कंपनी का एकाधिकार समाप्त कर दिया गया; भारत के साथ व्यापार सभी ब्रिटिश नागरिकों के लिए खोल दिया गया।

1833 का चार्टर अधिनियम:

- गवर्नर-जनरल (बंगाल) भारत के गवर्नर-जनरल बन गए।
- भारत के पहले **गवर्नर-जनरल लॉर्ड विलियम बेंटिक** थे।
- यह ब्रिटिश भारत में केंद्रीकरण की दिशा में अंतिम कदम था।
- भारत के लिए एक केंद्रीय विधायिका की शुरुआत क्योंकि इस अधिनियम ने बॉम्बे और मद्रास प्रांतों की विधायी शक्तियों को भी छीन लिया।
- इस अधिनियम ने **ईस्ट इंडिया कंपनी** की गतिविधियों को एक वाणिज्यिक निकाय के रूप में समाप्त कर दिया और यह पूरी तरह से एक प्रशासनिक निकाय बन गया।

1853 का चार्टर अधिनियम:

- गवर्नर-जनरल की परिषद के विधायी और कार्यकारी कार्यों को अलग कर दिया गया।
- **केंद्रीय विधायी परिषद में 6 सदस्य**। छह में से चार सदस्यों को मद्रास, बॉम्बे, बंगाल और आगरा की प्रांतीय सरकारों द्वारा नियुक्त किया गया था।
- इसने कंपनी के **सिविल सेवकों** (भारतीय सिविल सेवा सभी के लिए खुली) की भर्ती के आधार के रूप में खुली प्रतियोगिता की एक प्रणाली शुरू की।

1858 का भारत सरकार अधिनियम:

- भारत में कंपनी के शासन को क्राउन के शासन द्वारा प्रतिस्थापित किया गया।
- ब्रिटिश क्राउन की शक्तियों का प्रयोग भारत के राज्य सचिव द्वारा किया जाना था।
- उन्हें **15 सदस्यों वाली** भारत परिषद द्वारा सहायता प्रदान की गई।

- उन्हें **वायसराय** के माध्यम से अपने एजेंट के रूप में भारतीय प्रशासन पर पूर्ण अधिकार और नियंत्रण सौंपा गया था।
- **गवर्नर-जनरल को भारत का वायसराय** बनाया गया।
- **लॉर्ड कैनिंग** भारत के पहले वायसराय थे।
- **बोर्ड ऑफ कंट्रोल और कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स** को समाप्त कर दिया।

1861 का भारतीय परिषद अधिनियम:

- इसने पहली बार वायसराय की कार्यकारी + विधायी परिषद (गैर-आधिकारिक) जैसी संस्थाओं में भारतीय प्रतिनिधित्व शुरू किया। 3 भारतीयों ने विधान परिषद में प्रवेश किया।
- केंद्र और प्रांतों में विधान परिषदों की स्थापना की गई।
- इसमें प्रावधान किया गया कि विधायी कार्यों को करते समय वायसराय की कार्यकारी परिषद में कुछ भारतीय गैर-आधिकारिक सदस्यों के रूप में होने चाहिए।
- इसने **पोर्टफोलियो प्रणाली** को वैधानिक मान्यता प्रदान की।
- **बॉम्बे और मद्रास** प्रांतों को विधायी शक्तियों को बहाल करके विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया शुरू की।

1892 का भारत परिषद अधिनियम:

- अप्रत्यक्ष चुनाव (**नामांकन**) शुरू किया।
- विधान परिषदों के आकार को बढ़ाया।
- विधान परिषदों के कार्यों को बढ़ाया और उन्हें बजट पर चर्चा करने और कार्यपालिका से प्रश्न पूछने की शक्ति दी।

1909 का भारतीय परिषद अधिनियम:

- इस अधिनियम को **मॉर्ले-मिटो सुधार** के रूप में भी जाना जाता है।
- विधान परिषदों के लिए **प्रत्यक्ष चुनाव**, एक प्रतिनिधि और लोकप्रिय तत्व शुरू करने का पहला प्रयास।
- इसने केंद्रीय विधान परिषद का नाम बदलकर **इम्पीरियल विधान परिषद** कर दिया।
- केंद्रीय विधान परिषद के सदस्यों की संख्या 16 से बढ़ाकर 60 कर दी गई।
- **'पृथक निर्वाचक मंडल'** की अवधारणा को स्वीकार करके मुसलमानों के लिए सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व की एक प्रणाली शुरू की।
- **पहली बार वायसराय** की कार्यकारी परिषद में भारतीय (सत्येंद्र प्रसन्न सिन्हा, कानून सदस्य के रूप में)।

1919 का भारत सरकार अधिनियम:

- इस अधिनियम को **मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार** के रूप में भी जाना जाता है।
- केंद्रीय विषयों को प्रांतीय विषयों से अलग और सीमांकित किया गया।
- प्रांतीय विषयों में दोहरे शासन की योजना, **'द्वैध शासन'**, शुरू की गई।
- द्वैध शासन प्रणाली के तहत, प्रांतीय विषयों को दो भागों में विभाजित किया गया था - हस्तांतरित और आरक्षित। आरक्षित विषयों पर, गवर्नर विधान परिषद के प्रति उत्तरदायी नहीं था।
- इस अधिनियम ने पहली बार केंद्र में **द्विसदनीयता** शुरू की।
- 140 सदस्यों वाली विधान सभा और 60 सदस्यों वाली विधान परिषद।
- प्रत्यक्ष चुनाव।
- अधिनियम में यह भी आवश्यक था कि वायसराय की कार्यकारी परिषद के **छह सदस्यों** में से तीन (कमांडर-इन-चीफ के अलावा) भारतीय होने चाहिए।
- लोक सेवा आयोग की स्थापना का प्रावधान किया।

1935 का भारत सरकार अधिनियम:

- अधिनियम में प्रांतों और रियासतों को इकाइयों के रूप में मिलाकर एक अखिल भारतीय संघ की स्थापना का प्रावधान किया गया था, हालाँकि परिकल्पित संघ कभी अस्तित्व में नहीं आया।
- **तीन सूचियाँ:** अधिनियम ने केंद्र और इकाइयों के बीच शक्तियों को तीन सूचियों की मदों में विभाजित किया, अर्थात् **संघीय सूची, प्रांतीय सूची और समवर्ती सूची**।
- केंद्र के लिए संघीय सूची में 59 मदें, प्रांतों के लिए प्रांतीय सूची में 54 मदें और दोनों के लिए समवर्ती सूची में 36 मदें थीं।
- अवशिष्ट शक्तियाँ गवर्नर-जनरल में निहित थीं।
- अधिनियम ने प्रांतों में द्वैध शासन को समाप्त कर दिया और **'प्रांतीय स्वायत्तता'** शुरू की।
- इसने केंद्र में द्वैध शासन को अपनाने का प्रावधान किया।
- 11 प्रांतों में से 6 में **द्विसदनीयता** शुरू की।
- ये छह प्रांत असम, बंगाल, बॉम्बे, बिहार, मद्रास और संयुक्त प्रांत थे।
- संघीय न्यायालय की स्थापना का प्रावधान किया।
- **भारत परिषद** को समाप्त कर दिया।

1947 का भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम:

- इसने भारत को एक स्वतंत्र और संप्रभु राज्य घोषित किया।
- केंद्र और प्रांतों दोनों में **उत्तरदायी सरकारों** की स्थापना की।
- वायसराय भारत और प्रांतीय गवर्नरों को संवैधानिक (**सामान्य प्रमुख**) के रूप में नामित किया।

- स्वतंत्रता के बाद, विभिन्न क्षेत्रों, विशेष रूप से दक्षिण भारत से, भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की मांगें उठने लगीं।
- भारत सरकार ने भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की व्यवहार्यता की जांच के लिए **एस के धर समिति** नियुक्त की।
- **धर समिति** ने भाषाई कारकों के बजाय प्रशासनिक सुविधा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की सिफारिश की।
- इससे बहुत नाराजगी पैदा हुई और एक और समिति - **जेवीपी समिति** - की नियुक्ति हुई - जिसमें **जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और पट्टाभि सीतारमैया** शामिल थे।
- जेवीपी समिति की रिपोर्ट ने औपचारिक रूप से भाषा को राज्यों के पुनर्गठन के आधार के रूप में खारिज कर दिया।
- हालांकि, भाषाई आधार पर अलग आंध्र राज्य के निर्माण के लिए 56 दिनों की भूख हड़ताल के बाद एक प्रतिष्ठित कांग्रेसी, पोद्दी श्रीरामुलु की मृत्यु ने भारत सरकार को पहला भाषाई राज्य बनाने के लिए मजबूर कर दिया, जिसे आंध्र राज्य के रूप में जाना जाता है।
- आंध्र राज्य के निर्माण ने अन्य क्षेत्रों से भाषाई आधार पर राज्यों के निर्माण की मांग को तेज कर दिया। इसने भारत सरकार को पूरे प्रश्न की फिर से जांच करने के लिए फजल अली आयोग नियुक्त करने के लिए मजबूर कर दिया।
- फजल अली की रिपोर्ट ने मोटे तौर पर भाषा को राज्यों के पुनर्गठन के आधार के रूप में स्वीकार किया। लेकिन, इसने 'एक भाषा-एक राज्य' के सिद्धांत को खारिज कर दिया। उनका विचार था कि देश की राजनीतिक इकाइयों के किसी भी पुनर्निर्माण में भारत की एकता को प्राथमिक विचार माना जाना चाहिए।
- राज्यों के किसी भी पुनर्गठन योजना में चार प्रमुख कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए:
 - देश की एकता और सुरक्षा का संरक्षण और सुदृढ़ीकरण।
 - भाषाई और सांस्कृतिक समरूपता।
 - वित्तीय, आर्थिक और प्रशासनिक विचार।
 - प्रत्येक राज्य के साथ-साथ पूरे राष्ट्र में लोगों के कल्याण की योजना और संवर्धन।

अध्याय - 4

भारत की नागरिकता - भाग II (अनुच्छेद 5-11)

भारत की नागरिकता

संविधान का (भाग II) (अनुच्छेद 5 से 11) नागरिकता के प्रावधानों से संबंधित है। नागरिकता शब्द का अर्थ किसी भी राज्य की पूर्ण सदस्यता का आनंद लेना है जिसमें एक नागरिक के पास नागरिक और राजनीतिक अधिकार होते हैं।

संविधान भारत के नागरिकों को निम्नलिखित अधिकार और विशेषाधिकार प्रदान करता है (और एलियंस को वही मना करता है) -

- धर्म, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर **भेदभाव के खिलाफ अधिकार** (अनुच्छेद 15)।
- **सार्वजनिक रोजगार** के मामले में अवसर की समानता का अधिकार (अनुच्छेद 16)।
- **भाषण और अभिव्यक्ति, सभा, संगठन, आंदोलन, निवास और पेशे की स्वतंत्रता का अधिकार** (अनुच्छेद 19)।
- **सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार** (अनुच्छेद 29 और 30)।
- लोकसभा और राज्य विधान सभा के चुनावों में मतदान का अधिकार।
- संसद और राज्य विधानमंडल की सदस्यता के लिए चुनाव लड़ने का अधिकार।
- कुछ सार्वजनिक पदों को धारण करने की पात्रता, अर्थात्, भारत के राष्ट्रपति, भारत के उपराष्ट्रपति, सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, राज्यों के राज्यपाल, भारत के अटॉर्नी जनरल और राज्यों के महाधिवक्ता। (भारत में जन्म से नागरिक और साथ ही प्राकृतिक नागरिक दोनों राष्ट्रपति के पद के लिए पात्र हैं)।

उपरोक्त अधिकारों के साथ-साथ, नागरिकों का भारतीय राज्य के प्रति कुछ कर्तव्य भी हैं, जैसे कि करों का भुगतान करना, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का सम्मान करना, देश की रक्षा करना, आदि।

कुछ महत्वपूर्ण तथ्य:

- संविधान **अनुच्छेद 5 से 11** तक नागरिकता से संबंधित है।
- हालांकि, यह केवल उन व्यक्तियों की पहचान करता है जो इसकी शुरुआत (यानी, **26 जनवरी, 1950** को) में भारत के नागरिक बने।
- यह इसकी शुरुआत के बाद नागरिकता के अधिग्रहण या हानि की समस्या से नहीं निपटता है।
- यह संसद को ऐसे मामलों और नागरिकता से संबंधित किसी भी अन्य मामले के लिए कानून बनाने का अधिकार

देता है। तदनुसार, संसद ने **नागरिकता अधिनियम (Citizenship Act)** बनाया है।

इसलिए हमें (अनुच्छेद 5 से 11) और (नागरिकता अधिनियम) के बारे में जानना चाहिए।

संविधान के अनुसार, निम्नलिखित चार श्रेणियों के व्यक्ति इसकी शुरुआत यानी **26 जनवरी 1950** को भारत के नागरिक बने:

अनुच्छेद 5: संविधान के प्रारंभ पर नागरिकता:

(अनुच्छेद 5): एक व्यक्ति जिसका भारत में अधिवास था और उसने तीन शर्तों में से किसी एक को भी पूरा किया था, अर्थात्,

- यदि उसका जन्म भारत में हुआ था; या
- यदि उसके माता-पिता में से किसी एक का जन्म भारत में हुआ था; या
- यदि वह संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले पांच वर्षों तक आम तौर पर भारत में रहा हो, तो वह भारत का नागरिक बन गया।

अनुच्छेद 6 और 7 दो श्रेणियों के व्यक्तियों से संबंधित हैं, अर्थात्, वे जो भारत में निवासी थे लेकिन पाकिस्तान चले गए थे और वे जो पाकिस्तान में निवासी थे लेकिन भारत चले गए थे। जो पाकिस्तान से भारत आए उन्हें दो श्रेणियों में बांटा गया:

- जो 19 जुलाई, 1948 से पहले आए थे, और
- जो उस तारीख के बाद आए थे।

अनुच्छेद 6: पाकिस्तान से भारत में प्रवास करने वाले कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार:

(अनुच्छेद 6): एक व्यक्ति जो पाकिस्तान से भारत में प्रवास कर गया, वह भारत का नागरिक बन गया यदि वह या उसके माता-पिता में से कोई एक या उसके दादा-दादी में से कोई अविभाजित भारत में पैदा हुआ था और उसने दो शर्तों में से किसी एक को भी पूरा किया था, अर्थात्, यदि वह 19 जुलाई, 1948 से पहले भारत में प्रवास कर गया था, तो वह अपने प्रवास की तारीख से आम तौर पर भारत में रहा हो; या यदि वह 19 जुलाई, 1948 को या उसके बाद भारत में प्रवास कर गया, तो उसे भारत के नागरिक के रूप में पंजीकृत किया गया हो। लेकिन, एक व्यक्ति को तभी पंजीकृत किया जा सकता है जब वह पंजीकरण के लिए अपने आवेदन की तारीख से पहले छह महीने तक भारत में रहा हो।

अनुच्छेद 7: पाकिस्तान के कुछ प्रवासियों के नागरिकता के अधिकार:

अनुच्छेद 5 और 6 में किसी भी बात के होते हुए भी, एक व्यक्ति जो 1 मार्च 1947 के बाद भारत के क्षेत्र से उस क्षेत्र में प्रवास कर गया है जो अब पाकिस्तान में शामिल है, उसे भारत का नागरिक नहीं माना जाएगा:

बशर्ते कि इस अनुच्छेद में कोई भी बात ऐसे व्यक्ति पर लागू नहीं होगी, जो इस प्रकार अब पाकिस्तान में शामिल क्षेत्र में प्रवास करने के बाद, किसी कानून के अधिकार द्वारा या उसके तहत जारी किए गए पुनर्वास या स्थायी वापसी के परमिट के तहत भारत के क्षेत्र में लौट आया है और ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को अनुच्छेद 6 के खंड (B) के प्रयोजनों के लिए **19 जुलाई, 1948** के बाद भारत के क्षेत्र में प्रवास करना माना जाएगा।

अनुच्छेद 8: भारत के बाहर रहने वाले भारतीय मूल के कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार:

अनुच्छेद 5 में किसी भी बात के होते हुए भी, कोई भी व्यक्ति जो या जिसके माता-पिता में से कोई एक या जिसके दादा-दादी में से कोई **भारत सरकार अधिनियम, 1935** (जैसा कि मूल रूप से अधिनियमित किया गया था) में परिभाषित भारत में पैदा हुआ था, और जो इस प्रकार परिभाषित भारत के बाहर किसी देश में आम तौर पर रह रहा है, उसे भारत का नागरिक माना जाएगा यदि उसे भारत के राजनयिक या वाणिज्य दूतावास प्रतिनिधि द्वारा उस देश में भारत के नागरिक के रूप में पंजीकृत किया गया है जहाँ वह इस समय रह रहा है, ऐसे राजनयिक या वाणिज्य दूतावास प्रतिनिधि को उसके द्वारा किए गए आवेदन पर, इस संविधान के प्रारंभ से पहले या बाद में, डोमिनियन ऑफ इंडिया या भारत सरकार द्वारा निर्धारित रूप और तरीके से।

सारांश में, ये प्रावधान नागरिकता से संबंधित हैं -

- भारत में स्थायी निवास करने वाले व्यक्तियों; पाकिस्तान से प्रवासित व्यक्तियों;
- पाकिस्तान में प्रवासित व्यक्तियाँ, जो बाद में लौट आए; और
- भारत से बाहर निवास करने वाले भारतीय मूल के व्यक्तियों।

अनुच्छेद 9: स्वेच्छा से विदेशी राज्य की नागरिकता प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की भारत की नागरिकता नहीं होगी

कोई व्यक्ति **अनुच्छेद 5** के तहत भारत का नागरिक नहीं होगा या **अनुच्छेद 6** या **अनुच्छेद 8** के तहत भारत का

नागरिक नहीं माना जाएगा यदि उसने स्वेच्छा से किसी विदेशी राज्य की नागरिकता प्राप्त की हो।

अनुच्छेद 10: नागरिकता के अधिकारों का निरंतरता:

हर व्यक्ति जो भारत का नागरिक है या किसी उपरोक्त प्रावधानों के तहत भारत का नागरिक माना जाता है, वह संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन, ऐसे नागरिक बने रहेंगे।

अनुच्छेद 11: संसद नागरिकता के अधिकार को कानून द्वारा नियंत्रित करेगी:

इस भाग के उपरोक्त प्रावधानों में से कोई भी प्रावधान संसद के अधिकार को कम नहीं करेगा, जो नागरिकता के अर्जन और समाप्ति और नागरिकता से संबंधित अन्य सभी मामलों से संबंधित किसी भी प्रावधान को बनाने के लिए है।

भारत की नागरिकता से संबंधित जानकारी:

- भारत का नागरिक बनाने का प्रावधान भारतीय संविधान की धारा 5 से 11 (भाग 11) द्वारा नियंत्रित है।
- भारतीय संविधान की उपरोक्त धाराओं के अलावा, नागरिकता भारतीय नागरिकता अधिनियम से भी गहरे रूप से जुड़ी हुई है, जिसे भारतीय संसद ने 1955 में पारित किया था।
- **नागरिकता अधिनियम 1955** संविधान की शुरुआत के बाद भारत की नागरिकता के बारे में बात करता है। यह एक अधिनियम है जो भारतीय नागरिकता के अर्जन और समाप्ति से संबंधित प्रावधानों को प्रदान करता है।
- इस मामले से संबंधित विधायी प्रावधान नागरिकता अधिनियम 1955 है, जिसे नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1986, नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1992, नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2003, नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2005, और नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2019 द्वारा संशोधित किया गया है।
- नागरिकता अधिनियम 1955 के अनुसार भारतीय नागरिकता अर्जित करने के तरीके: भारतीय नागरिकता निम्नलिखित तरीकों से अर्जित की जा सकती है: (1) भारत के संविधान की शुरुआत पर नागरिकता (2) जन्म से नागरिकता: ध्यान दें - इस प्रावधान में विभिन्न अवधियों के लिए अलग-अलग उपधारा हैं (3) वंशज से नागरिकता (4) पंजीकरण से नागरिकता (5) प्राकृतिककरण द्वारा नागरिकता।
- नागरिकता अधिनियम 1955 के अनुसार भारतीय नागरिकता की समाप्ति: भारतीय नागरिकता तीन तरीकों से खोई जा सकती है - **त्याग, समाप्ति और वंचना।**

- **26 नवंबर 1949** को भारत के क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्ति स्वचालित रूप से भारतीय नागरिक बन गए थे, क्योंकि भारतीय संविधान के संबंधित प्रावधान लागू हो गए थे। (भारत के संविधान की शुरुआत पर नागरिकता)।
- कोई भी व्यक्ति जो 26 जनवरी 1950 को या उसके बाद, लेकिन **1 जुलाई 1987** को 1986 अधिनियम के प्रारंभ से पहले भारत में पैदा हुआ है, जन्म से भारत का नागरिक है। [जन्म से नागरिकता]
- 1 जुलाई 1987 को या उसके बाद भारत में पैदा हुआ व्यक्ति भारत का नागरिक है यदि जन्म के समय माता या पिता में से कोई एक भारत का नागरिक था। [जन्म से नागरिकता]
- **3 दिसंबर 2004** को या उसके बाद भारत में पैदा हुए व्यक्तियों को केवल तभी भारत का नागरिक माना जाता है यदि उनके माता-पिता दोनों भारत के नागरिक हैं या यदि एक माता-पिता भारत का नागरिक है और दूसरा उनके जन्म के समय एक अवैध प्रवासी नहीं है। [जन्म से नागरिकता]
- भारतीय राष्ट्रीयता कानून बड़े पैमाने पर जस सैंगुनिस (**खून के अधिकार द्वारा नागरिकता**) का पालन करता है, जस सोली (क्षेत्र के भीतर जन्म के अधिकार द्वारा नागरिकता) के विपरीत।
- भारतीय संविधान का अनुच्छेद 9 कहता है कि जो व्यक्ति स्वेच्छा से किसी अन्य देश की नागरिकता प्राप्त कर लेता है, वह अब भारत का नागरिक नहीं रहता है। इसके अलावा, पासपोर्ट अधिनियम के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य देश की नागरिकता प्राप्त करता है तो उसे अपना भारतीय पासपोर्ट सरेण्डर करना होगा, यदि वह पासपोर्ट सरेण्डर करने में विफल रहता है तो यह अधिनियम के तहत एक दंडनीय अपराध है।
- **भारतीय मूल के व्यक्ति (PIO) कार्ड:** एक PIO कार्ड आवेदक को भारतीय मूल का व्यक्ति होना चाहिए जो पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, भूटान, अफगानिस्तान, चीन और नेपाल के अलावा किसी भी देश का नागरिक हो; या एक व्यक्ति जिसके पास किसी भी समय भारतीय पासपोर्ट रहा हो या वह भारतीय नागरिक या भारतीय मूल के व्यक्ति का जीवनसाथी हो;
- **भारत के प्रवासी नागरिक (OCI) कार्ड:** OCI कार्ड उन विदेशी नागरिकों के लिए है जो 26.01.1950 को भारत का नागरिक बनने के लिए पात्र थे या उस तिथि को या उसके बाद भारत के नागरिक थे। बांग्लादेश और पाकिस्तान के नागरिकों के आवेदनों की अनुमति नहीं है।
- **प्रवासी भारतीय कार्ड:** संसद में एक नया विधेयक [नागरिकता (संशोधन) विधेयक] लंबित है, जो मौजूदा भारत के प्रवासी नागरिक (OCI) कार्ड और भारतीय मूल के व्यक्ति (PIO) कार्ड को समाप्त करना और उन्हें एक नए प्रवासी भारतीय कार्ड से बदलना चाहता है।

- जबकि PIO कार्डधारकों को अलग वीजा की आवश्यकता नहीं होती है और वे 15 वर्षों के लिए कई प्रवेश सुविधा के साथ भारत में प्रवेश कर सकते हैं; OCI कार्ड भारत आने के लिए कई प्रविष्टियों, बहुउद्देशीय आजीवन वीजा हैं। OCI कार्डधारकों की गैर-निवासी भारतीयों के साथ आर्थिक, वित्तीय और शैक्षिक मामलों में समानता है, कृषि भूमि प्राप्त करने को छोड़कर।
- एक PIO कार्डधारक को किसी भी एक यात्रा पर भारत में 180 दिनों से अधिक रहने पर स्थानीय पुलिस अधिकारियों के साथ पंजीकरण कराना आवश्यक है।
- OCI दोहरी नागरिकता नहीं है। OCI कार्डधारक के लिए कोई मतदान अधिकार नहीं है। भारत के राष्ट्रपति को भारत का प्रथम नागरिक कहा जाता है।

नागरिकता अधिनियम, 1955:

संविधान के अनुच्छेद 11 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अनुसार संसद द्वारा 1955 में नागरिकों से संबंधित एक व्यापक कानून पारित किया गया था। अधिनियम के प्रावधानों को मोटे तौर पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है, नागरिकता का अधिग्रहण, नागरिकता की समाप्ति और पूरक प्रावधान।

नागरिकता का अर्जन:

यह अधिनियम भारत की नागरिकता प्राप्त करने के पाँच तरीके प्रदान करता है। ये हैं:

- जन्म से नागरिकता
- वंशानुक्रम से नागरिकता
- पंजीकरण द्वारा नागरिकता
- प्राकृतिककरण द्वारा नागरिकता
- क्षेत्र के सम्मिलन द्वारा (भारत सरकार द्वारा)

(1) जन्म से:

- जो व्यक्ति 26 जनवरी 1950 के बाद भारत में जन्मे हैं, लेकिन 30 जून 1987 से पहले, वे जन्म से भारतीय नागरिक होंगे।
- जो व्यक्ति 1 जुलाई 1987 के बाद भारत में जन्मे हैं, वे जन्म से भारतीय नागरिक होंगे यदि जन्म के समय उनके माता-पिता में से कोई एक भारतीय नागरिक था।
- नोट: भारत में नियुक्त विदेशी राजनयिकों के बच्चे और शत्रु देश के नागरिक जन्म से भारतीय नागरिकता प्राप्त नहीं कर सकते।

(2) वंशानुक्रम से:

- जो व्यक्ति 26 जनवरी 1950 के बाद भारत से बाहर जन्मा है, वह वंशानुक्रम से भारतीय नागरिक होगा यदि उसके पिता या माता भारतीय नागरिक थे।
- जो लोग वंशानुक्रम से भारतीय नागरिक हैं, और जो लोग भारत सरकार में सेवा में हैं, उनके बच्चे भी इस प्रावधान का लाभ उठा सकते हैं और पंजीकरण के माध्यम से भारतीय नागरिक बन सकते हैं, यदि वे ऐसा चाहते हैं।

(3) पंजीकरण द्वारा:

- कोई भी व्यक्ति जो संविधान या इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत पहले से भारतीय नागरिक नहीं है, वह पंजीकरण द्वारा नागरिकता प्राप्त कर सकता है यदि वह निम्नलिखित पांच श्रेणियों में से किसी एक से संबंधित हो:
- भारतीय मूल के व्यक्ति जो सामान्य रूप से भारत में निवास करते हैं और जिन्होंने पंजीकरण के लिए आवेदन करने से ठीक छह महीने पहले तक भारत में निवास किया हो।
- भारतीय मूल के व्यक्ति जो **अविभाजित भारत (undivided India)** के बाहर किसी देश या स्थान में सामान्य रूप से निवास करते हैं;
- महिलाएँ जो भारतीय नागरिकों से विवाहिता हैं या थीं;
- भारतीय नागरिकों के नाबालिग बच्चे; और
- वे व्यक्ति जो पूर्ण आयु और क्षमता वाले हैं और जो राष्ट्रमंडल देशों या **आयरलैंड गणराज्य** के नागरिक हैं।

(4) प्राकृतिककरण द्वारा:

- कोई भी व्यक्ति जो उपर्युक्त श्रेणियों में से नहीं आता, वह यदि भारत सरकार द्वारा स्वीकार्य आवेदन पर प्राकृतिककरण द्वारा भारतीय नागरिकता प्राप्त कर सकता है और उसे इस संबंध में प्रमाणपत्र प्रदान किया जाता है। एक प्राकृतिककरण प्रमाणपत्र के लिए आवेदन करने वाले व्यक्ति को निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना होता है:
- वह किसी ऐसे देश का नागरिक नहीं है जो भारतीयों को उस देश में प्राकृतिककरण द्वारा नागरिकता प्राप्त करने से रोकता हो;
 - उसने जिस देश का नागरिक था, उसकी नागरिकता त्याग दी हो;
 - उसने भारत में निवास किया हो या भारत सरकार की सेवा में रहा हो, सामान्य रूप से, आवेदन करने की तारीख से ठीक एक वर्ष पहले तक;
 - उपरोक्त एक वर्ष से पहले के सात वर्षों के दौरान, उसने भारत में निवास किया हो या भारत सरकार की सेवा में रहा हो, कुल मिलाकर चार वर्षों से कम नहीं।
 - वह अच्छे चरित्र का है;
 - उसके पास संविधान में निर्दिष्ट भाषा का पर्याप्त ज्ञान है;

- सर्बानंद सोनोवाल (असम के पूर्व मुख्यमंत्री) की याचिका पर, अधिनियम को असंवैधानिक ठहराया गया और 2005 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया।
- इसे अंततः विदेशी (असम के लिए न्यायाधिकरण) आदेश, 2006 से बदल दिया गया, जिसे फिर से 2007 में रद्द कर दिया गया था।
- IMDT मामले में, अदालत ने भौगोलिक विचारों के आधार पर वर्गीकरण को अनुच्छेद 14 के तहत समानता के अधिकार का उल्लंघन माना।

निष्कर्ष:

केवल धर्म के आधार पर निवास के लिए छह साल की रियायत देना धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों के खिलाफ है। इसे 'मूल संरचना सिद्धांत' की परीक्षा में खरा उतरने के लिए हटा दिया जाना चाहिए।

भारत, एक देश के रूप में जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की विचारधारा का पालन करता है, ऐसे फैसले लेने में जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए जो अपने नागरिकों को मताधिकार से वंचित कर सकते हैं - सदियों से चले आ रहे अपने मूल्यों का खंडन करते हुए।

समय की आवश्यकता यह है कि केंद्र सरकार को असम के अंतिम NRC से बाहर किए गए लोगों के भाग्य के बारे में कार्रवाई का स्पष्ट मार्ग तैयार करना चाहिए और राजनीतिक दलों को चुनावी संभावनाओं के माध्यम से पूरी NRC प्रक्रिया को रंगने से बचना चाहिए जो सांप्रदायिक हिंसा में बदल सकती है।

एक अत्यधिक कानूनी दृष्टिकोण केवल अधिक तनाव, असुरक्षा और चिंता पैदा करेगा।

अध्याय - 5

मौलिक अधिकार: भाग III (अनुच्छेद 12-35)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 12-35 (भाग III) मौलिक अधिकारों से संबंधित हैं। मौलिक अधिकार मुख्य रूप से अमेरिकी संविधान के बिल ऑफ राइट्स से प्रेरित हैं।

भाग 3 और भाग 4 मिलकर संविधान की अंतरात्मा या राज्य का बौद्धिक घटक बनाते हैं। मौलिक अधिकार लोकतंत्र के स्वस्थ कामकाज के लिए आवश्यक हैं इसलिए इन्हें भारतीय लोकतंत्र का आधारस्तंभ कहा जाता है।

ये अधिकार एक व्यक्ति के अपने पूर्ण शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विस्तार को प्राप्त करने के लिए सबसे अपरिहार्य संपत्ति हैं। वे मौलिक भी हैं क्योंकि राज्य इन अधिकारों को नहीं छीन सकता है और कोई भी कानून जो उनका उल्लंघन करता है, उसे शून्य और शून्य घोषित कर दिया जाएगा। यह राज्य को मनमाना या सत्तावादी बनने से रोकने के लिए है, वे एक सभ्य समाज को स्थापित करने के लिए मौलिक हैं।

अधिकार स्वतंत्रता या हक के कानूनी, सामाजिक या नैतिक सिद्धांत हैं; अर्थात्, अधिकार कुछ कानूनी प्रणाली, सामाजिक सम्मेलन या नैतिक सिद्धांत के अनुसार, लोगों को क्या अनुमति है या क्या देना है, इसके बारे में मौलिक मानक नियम हैं। कानून और नैतिकता जैसे विषयों में अधिकार का अत्याधिक महत्व है, विशेषकर न्याय और कर्तव्यशास्त्र के सिद्धांतों में।

प्राकृतिक अधिकार वे अधिकार हैं जो "प्राकृतिक" हैं "कृत्रिम नहीं, मानव निर्मित नहीं" के अर्थ में, जैसे कि मानव स्वभाव या किसी देवता के आदेशों से प्राप्त अधिकार। वे सार्वभौमिक हैं; अर्थात्, वे सभी लोगों पर लागू होते हैं और किसी विशिष्ट समाज के कानूनों से प्राप्त नहीं होते हैं। वे आवश्यक रूप से मौजूद हैं, प्रत्येक व्यक्ति में निहित हैं, और छीने नहीं जा सकते।

उदाहरण के लिए, यह तर्क दिया गया है कि मनुष्यों को जीवन जीने का एक प्राकृतिक अधिकार है। इन्हें कभी-कभी नैतिक अधिकार या अहस्तांतरणीय अधिकार कहा जाता है। इसके विपरीत, कानूनी अधिकार एक समाज के रीति-रिवाजों, कानूनों, विधियों या विधायिकाओं द्वारा कार्यों पर आधारित होते हैं। एक कानूनी अधिकार का एक उदाहरण नागरिकों का मतदान का अधिकार है। नागरिकता, स्वयं, को अक्सर कानूनी अधिकार होने के आधार के रूप में माना जाता है और इसे "अधिकार रखने का अधिकार" के रूप में परिभाषित किया गया है। कानूनी अधिकारों को कभी-कभी नागरिक अधिकार या वैधानिक अधिकार कहा जाता है और वे सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से सापेक्ष होते

हैं क्योंकि इनका अर्थ एक विशिष्ट सामाजिक संदर्भ पर निर्भर होता है।

मौलिक अधिकार:

मौलिक अधिकार संविधान द्वारा संरक्षित और गारंटीकृत हैं और उन्हें विधायिका द्वारा बनाए गए एक साधारण कानून द्वारा नहीं छीना जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति के कानूनी अधिकार का उल्लंघन होता है, तो वह एक साधारण अदालत में जा सकता है, लेकिन यदि एक मौलिक अधिकार का उल्लंघन होता है तो संविधान प्रावधान करता है कि प्रभावित व्यक्ति उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में जा सकता है।

मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा

महासभा, सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए उपलब्धि के एक सामान्य मानक के रूप में मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा की घोषणा करती है, इस उद्देश्य से कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का प्रत्येक अंग, इस घोषणा को लगातार ध्यान में रखते हुए, शिक्षण और शिक्षा द्वारा इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान को बढ़ावा देने और प्रगतिशील उपायों, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय द्वारा, सदस्य राज्यों के लोगों के बीच और उनके अधिकार क्षेत्र के क्षेत्रों के लोगों के बीच उनकी सार्वभौमिक और प्रभावी मान्यता और अवलोकन को सुरक्षित करने का प्रयास करेगा।

1925 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 'अधिकारों की घोषणा' को अपनाते हुए **कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल** का मसौदा अंतिम रूप दिया। 1927 में आयोजित कांग्रेस के मद्रास सत्र ने भविष्य के किसी भी संवैधानिक ढांचे में 'मौलिक अधिकारों की घोषणा' को शामिल करने की मांग की।

1931 में कांग्रेस के कराची सत्र ने मौलिक अधिकारों का एक विस्तृत कार्यक्रम अपनाया। **भारत सरकार अधिनियम, 1935** भारतीय नेताओं की निराशा के लिए बिना किसी अधिकार विधेयक के पारित किया गया था।

यह 1945 की 'समूह समिति' थी जिसने बाद में मौलिक अधिकारों की एक लिखित संहिता की आवश्यकता पर जोर दिया और संविधान सभा ने संविधान में मानव अधिकारों को शामिल करने की जोरदार मांग उठाई।

संविधान के निर्माताओं ने **संयुक्त राज्य अमेरिका** के संविधान (अर्थात्, बिल ऑफ राइट्स) से प्रेरणा ली और संविधान के भाग III में अनुच्छेद 12 से 35 तक मौलिक अधिकारों को अपनाया।

संविधान के भाग III (जिसमें FRs शामिल हैं) को सही मायने में 'भारत का मैग्नो कार्टा' कहा जाता है।

मौलिक अधिकार न्यायोचित हैं - व्यक्तियों को उनके प्रवर्तन के लिए अदालतों में जाने की अनुमति देते हैं, यदि और जब उनका उल्लंघन होता है। मौलिक अधिकारों को इसलिए ऐसा नाम दिया गया है क्योंकि वे संविधान द्वारा गारंटीकृत और संरक्षित हैं, जो देश का मौलिक कानून है।

मौलिक अधिकार बिना किसी भेदभाव के सभी व्यक्तियों और कानूनी संस्थाओं को संविधान द्वारा गारंटीकृत हैं। वे सभी व्यक्तियों की समानता, व्यक्ति की गरिमा, व्यापक जनहित और राष्ट्र की एकता को बनाए रखते हैं।

'कानूनों की सरकार और मनुष्यों की नहीं' स्थापित करना संविधान ने उन अधिकारों को सूचीबद्ध किया जिन्हें विशेष रूप से संरक्षित किया जाएगा और उन्हें 'मौलिक अधिकार' कहा गया।

ये अधिकार इतने महत्वपूर्ण हैं कि संविधान ने उन्हें अलग से सूचीबद्ध किया है और उनकी सुरक्षा के लिए विशेष प्रावधान किए हैं। संविधान स्वयं सुनिश्चित करता है कि उनका सरकार द्वारा उल्लंघन न हो।

वे राजनीतिक लोकतंत्र के आदर्श को बढ़ावा देते हैं। वे देश में एक सत्तावादी और निरंकुश शासन की स्थापना को रोकते हैं और राज्य द्वारा आक्रमण के खिलाफ लोगों की स्वतंत्रताओं की रक्षा करते हैं।

वे कार्यपालिका की अत्याचारी शक्ति और विधायिका के मनमाने कानून की जाँच और संतुलन करते हैं। संक्षेप में, उनका उद्देश्य कानूनों की सरकार स्थापित करना है न कि मनुष्यों की।

सामान्य अधिकार और मौलिक अधिकार:

- अधिकार या तो **कानूनी** (स्टैच्युटरी) या **संवैधानिक** हो सकते हैं। जब किसी अधिकार को देश के सामान्य कानून में पारित किया जाता है तो वह कानूनी अधिकार होता है। और जब संविधान किसी अधिकार की गारंटी देता है, तो वह संवैधानिक अधिकार बन जाता है।
- सामान्य कानूनी अधिकारों को सामान्य कानून द्वारा संरक्षित और लागू किया जाता है, जबकि मौलिक अधिकारों को देश के संविधान द्वारा संरक्षित और गारंटी दी जाती है।
- सामान्य अधिकारों को विधानमंडल सामान्य विधायन प्रक्रिया द्वारा बदल सकता है, लेकिन मौलिक अधिकार को केवल संविधान में संशोधन द्वारा ही बदला जा सकता है।
- **न्यायपालिका** के पास मौलिक अधिकारों की रक्षा करने की शक्ति और जिम्मेदारी है, ताकि सरकार की कार्रवाइयों द्वारा उनका उल्लंघन न हो। कार्यकारी और विधायिका की कार्रवाइयां न्यायपालिका द्वारा अवैध घोषित की जा सकती हैं, यदि वे मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती हैं या उन्हें अनुचित तरीके से सीमित करती हैं।

प्रारंभ में, संविधान ने सात मौलिक अधिकारों का प्रावधान किया था:

- समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18)
- स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22)
- शोषण के खिलाफ अधिकार (अनुच्छेद 23-24)
- धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-28)
- सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार (अनुच्छेद 29-30)
- संपत्ति का अधिकार (अनुच्छेद 31)
- संविधानिक उपचार का अधिकार (अनुच्छेद 32)

हालांकि, संपत्ति का अधिकार 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा मौलिक अधिकारों की सूची से हटा दिया गया था। इसे संविधान के भाग XI में **अनुच्छेद 300-A** के तहत कानूनी अधिकार बना दिया गया है। अतः वर्तमान में केवल छह मौलिक अधिकार हैं।

मौलिक अधिकारों की विशेषताएँ:

- इनमें से कुछ अधिकार केवल नागरिकों को उपलब्ध हैं जबकि अन्य सभी व्यक्तियों को उपलब्ध हैं, चाहे वे नागरिक हों, विदेशी हों, या कानूनी व्यक्ति (जैसे कंपनियाँ या कॉर्पोरेशन्स) हों।
- राज्य मौलिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगा सकता है। (वे निराकार नहीं होते बल्कि योग्य होते हैं।)
- अनुच्छेद 20 और 21 के तहत गारंटी प्राप्त मौलिक अधिकारों को छोड़कर, शेष मौलिक अधिकारों को राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान निलंबित किया जा सकता है।
- अनुच्छेद 19 को केवल तभी निलंबित किया जा सकता है जब आपातकाल युद्ध या बाहरी आक्रमण के आधार पर घोषित किया गया हो, न कि सशस्त्र विद्रोह के आधार पर।
- अधिकांश मौलिक अधिकार राज्य की मनमानी कार्रवाइयों के खिलाफ उपलब्ध होते हैं।
- कुछ मौलिक अधिकार नकारात्मक स्वभाव के होते हैं, जो राज्य की शक्ति पर सीमाएँ लगाते हैं।
- कुछ अन्य मौलिक अधिकार सकारात्मक स्वभाव के होते हैं, क्योंकि वे व्यक्तियों को कुछ विशेष अधिकार प्रदान करते हैं।
- मौलिक अधिकारों की रक्षा और गारंटी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की जाती है। इसलिए, प्रभावित व्यक्ति सीधे सर्वोच्च न्यायालय जा सकते हैं, जरूरी नहीं कि उच्च न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील के रूप में।
- मौलिक अधिकार स्थायी या अडिग नहीं होते → इसका अर्थ है कि संसद इन्हें सीमित या निरस्त कर सकती है। लेकिन यह केवल संविधानिक संशोधन अधिनियम द्वारा ही किया जा सकता है, न कि सामान्य अधिनियम द्वारा। इसके अलावा, यह 'मूल संरचना' को प्रभावित किए बिना किया जा सकता है।
- उनके संचालन का दायरा अनुच्छेद 31A (संपदा आदि के अधिग्रहण के लिए प्रावधान करने वाले कानूनों की बचत),

अनुच्छेद 31B (9वीं अनुसूची में शामिल कुछ अधिनियमों और विनियमों का सत्यापन), और अनुच्छेद 31C (कुछ निदेशक सिद्धांतों को प्रभावी बनाने वाले कानूनों की बचत) द्वारा सीमित हैं।

- अनुच्छेद 33 संसद को सशस्त्र बलों, अर्धसैनिक बलों, पुलिस बलों, खुफिया एजेंसियों और समान सेवाओं के सदस्यों के लिए FR के अनुप्रयोग को प्रतिबंधित करने में सक्षम बनाता है।
- उनमें से अधिकांश सीधे लागू करने योग्य (**स्व-निष्पादक**) हैं जबकि उनमें से कुछ को उन पर प्रभाव डालने के लिए बनाए गए कानून के आधार पर लागू किया जा सकता है। ऐसा कानून केवल संसद द्वारा बनाया जा सकता है न कि राज्य विधानमंडलों द्वारा ताकि पूरे देश में एकरूपता बनी रहे (अनुच्छेद 35)।

अनुच्छेद 12 'राज्य की परिभाषा' प्रदान करता है। "राज्य" में शामिल हैं -

- भारत सरकार और संसद
- सरकार और राज्य विधानमंडल
- सभी स्थानीय प्राधिकरण (नगर पालिकाएँ, पंचायती राज, जिला बोर्ड आदि)
- अन्य वैधानिक और गैर-वैधानिक प्राधिकरण (LIC, ONGC, आदि)।

राज्य के कार्यों (उपरोक्त सभी) को मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के रूप में अदालतों में चुनौती दी जा सकती है। सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार, यहां तक कि एक निजी निकाय या राज्य के एक उपकरण के रूप में काम करने वाली एक एजेंसी भी अनुच्छेद 12 के तहत 'राज्य' के अर्थ में आती है।

अनुच्छेद 12 में न्यायपालिका का स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं है। हालाँकि, चूंकि न्यायपालिका मौलिक अधिकारों का संरक्षक है, एक स्पष्ट प्रश्न जो उठ सकता है वह है 'क्या अदालतों को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत 'राज्य' के रूप में परिभाषित किया जा सकता है?'

बॉम्बे उच्च न्यायालय ने हाल ही में द नेशनल फेडरेशन ऑफ द ब्लाइंड, महाराष्ट्र एंड अनर बनाम द हाई कोर्ट ऑफ ज्यूडिकेचर ऑफ बॉम्बे के मामले में इस सवाल का जवाब दिया, जिसमें उसने माना कि 'अदालतों को "राज्य" की परिभाषा में केवल प्रशासनिक पक्ष पर शामिल किया गया है, कर्मचारियों से निपटने के दौरान या प्रशासनिक क्षमता में निर्णय लेते समय न कि न्यायिक पक्ष पर।

अनुच्छेद 13 - मौलिक अधिकारों के साथ असंगत या उनका अपमान करने वाले कानून।

- यह राज्य को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधानों का विस्तार करने की भी अनुमति देता है। यह **अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST)** पर भी लागू होता है।
- उदाहरण के लिए, सार्वजनिक शिक्षण संस्थानों में सीटों का आरक्षण या शुल्क रियायतें।
- राज्य को नागरिकों के किसी भी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की शैक्षिक संस्थानों में प्रवेश के संबंध में किसी भी विशेष प्रावधान को बनाने का अधिकार है, जिसमें निजी शिक्षण संस्थान भी शामिल हैं, चाहे राज्य द्वारा सहायता प्राप्त हो या गैर-सहायता प्राप्त, **अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थानों को छोड़कर (2005 का 93वां संशोधन अधिनियम)**।

इस प्रावधान को प्रभावी बनाने के लिए, केंद्र ने **केंद्रीय शिक्षण संस्थान (प्रवेश में आरक्षण) अधिनियम, 2006** अधिनियमित किया, जो भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IIT) और भारतीय प्रबंधन संस्थानों (IIM) सहित सभी केंद्रीय उच्च शिक्षण संस्थानों में अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) से संबंधित उम्मीदवारों के लिए 27% का कोटा प्रदान करता है।

सोचें! क्रीमी लेयर के बारे में,

वास्तविक समानता लाने के लिए, सामाजिक और शैक्षिक रूप से वंचित समूह को दी गई प्राथमिकता उचित है।

अनुच्छेद 16: सार्वजनिक रोजगार के मामले में अवसर की समानता:

अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता की गारंटी प्रदान करता है।

अनुच्छेद 16(1) और 16(2) ने एक सामान्य नियम निर्धारित किया है कि सभी नागरिकों के लिए समान अवसर होगा और इस प्रकार भारतीय नागरिकता की सार्वभौमिकता पर जोर दिया गया है। केवल धर्म, जाति, जाति, लिंग, वंश, जन्मस्थान या निवास के आधार पर किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता है या राज्य के अधीन किसी भी रोजगार या कार्यालय के लिए अयोग्य नहीं ठहराया जा सकता है।

अपवाद:

अनुच्छेद 16(3) के अनुसार, राज्य के अधीन नियुक्तियों के मामले में विशेष पदों के लिए निवास योग्यता आवश्यक बनाई जा सकती है, इस प्रकार अधिवास प्रावधानों को मजबूत किया जा सकता है, हालांकि, राज्य में निवास के रूप में आवश्यकता को निर्धारित करने की शक्ति राज्यों में नहीं बल्कि संसद में निहित है।

अनुच्छेद 16(4) राज्य को "नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग" के पक्ष में नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए

विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है जो राज्य की राय में राज्य की सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं।

हमारे संविधान में गारंटीकृत समानता न केवल औपचारिक समानता प्रदान करने की कल्पना करती है बल्कि वास्तविक और पूर्ण समानता प्रदान करने की भी कल्पना करती है। अनुच्छेद 14 और 15(1) वास्तविक समानता के संवैधानिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए वर्गीकरण को सक्षम और विचार करते हैं। **अनुच्छेद 15(4) और 16(4) क्रमशः अनुच्छेद 15(1) और 16(1) से निकलते हैं और इन्हें कभी भी अनुच्छेद 15(1) और अनुच्छेद 16(1) के अपवाद के रूप में नहीं माना जा सकता है।**

103वां संविधान संशोधन अधिनियम: अनुच्छेद 15 और 16 में बदलाव

संविधान (103वां संशोधन) अधिनियम को **13 जनवरी 2018** को भारत के राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई। यह केंद्रीय सरकारी नौकरियों और सरकारी शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण प्रदान करता है। यह निजी उच्च शैक्षिक संस्थानों में प्रवेश पर भी लागू होता है। यह सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के नागरिकों पर लागू होता है, जो ऊपरी जातियों से संबंधित हैं।

यह आरक्षण **"मौजूदा आरक्षण के अतिरिक्त है और प्रत्येक श्रेणी में कुल सीटों का दस प्रतिशत से अधिक नहीं होगा"**। **कानून के उद्देश्य और कारणों की विवरणिका** में कहा गया है कि समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लोग अपनी वित्तीय अयोग्यता के कारण उच्च शैक्षिक संस्थानों और सार्वजनिक रोजगार में भाग लेने से मुख्य रूप से बाहर रह गए हैं, क्योंकि वे आर्थिक रूप से अधिक सक्षम व्यक्तियों से प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ हैं।

यह विधेयक इस उद्देश्य के साथ तैयार किया गया है कि संविधान के अनुच्छेद 46 को लागू किया जाए, जो एक निदेशक सिद्धांत है और सरकार से आग्रह करता है कि वह समाज के कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा करे। जबकि सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों को राज्य की सेवाओं में भागीदारी का लाभ मिला है, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को कोई ऐसा लाभ नहीं दिया गया था।

- **अनुच्छेद 15(6)** जोड़ा गया है, जो शैक्षिक संस्थानों (सार्वजनिक और निजी दोनों) में प्रवेश के लिए आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को आरक्षण प्रदान करता है, सिवाय उन अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थानों के जिनका उल्लेख अनुच्छेद 30(1) में है। इस संशोधन का उद्देश्य उन लोगों को आरक्षण प्रदान करना है जो अनुच्छेद 15(5) और 15(4) में शामिल नहीं होते (अर्थात्, SCs, STs और OBCs)।
- **अनुच्छेद 16(6)** जोड़ा गया है, जो सरकारी पदों पर आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को आरक्षण प्रदान करता है।

- एक व्याख्या में कहा गया है कि "आर्थिक कमजोरी" का निर्धारण "परिवार की आय" और अन्य "आर्थिक विपत्ति के संकेतकों" के आधार पर किया जाएगा।

समान काम के लिए समान वेतन:

समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धांत को भारतीय संविधान के तहत विशेष रूप से एक मौलिक अधिकार घोषित नहीं किया गया है। लेकिन यह निश्चित रूप से एक संवैधानिक लक्ष्य है। यदि समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धांत को उन पर लागू करने की मांग की जाती है तो यह एक अमूर्त सिद्धांत होगा जो अनुच्छेद 14 को आकर्षित नहीं करेगा।

लेकिन समानता खंड का कुछ सार होगा यदि समान काम का अर्थ समान वेतन है और ऐसा अधिकार संविधान की प्रस्तावना और संविधान के निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 39(घ) के आलोक में अनुच्छेद 14 और 16 से निकाला जा सकता है।

जब वे एक ही नियोजित के अधीन समान काम करते हैं तो बिना वर्गीकरण या अतार्किक वर्गीकरण के आधार पर वेतन का कोई असमान पैमाना नहीं हो सकता है। इस प्रकार, अदालत समान काम के लिए समान वेतन के निर्देश को उससे अधिक प्रामाणिक रूप से संवैधानिक बनाने के लिए समानता खंड का उदारतापूर्वक उपयोग करती है जो यह है।

अनुच्छेद 17: अस्पृश्यता का उन्मूलन:

अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और किसी भी रूप में इसका अभ्यास कानून के तहत दंडनीय बना दिया गया है।

यह वह अनुच्छेद था जिसे "महात्मा गांधी की जय" के नारों के साथ अपनाया गया था।

ध्यान दें: 'अस्पृश्यता' शब्द को न तो संविधान में और न ही अधिनियम में परिभाषित किया गया है। तदनुसार, संसद ने अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 पारित किया। 1976 में, इस अधिनियम का नाम बदलकर नागरिक अधिकार अधिनियम, 1955 कर दिया गया।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम (1955) के तहत, अस्पृश्यता के आधार पर किए गए अपराध छह महीने तक के कारावास या 500 रुपये तक के जुर्माने या दोनों से दंडनीय हैं।

अधिनियम एक नागरिक अधिकार को किसी व्यक्ति को संविधान के अनुच्छेद 17 द्वारा अस्पृश्यता के उन्मूलन के कारण प्राप्त किसी भी अधिकार के रूप में परिभाषित करता है।

'अस्पृश्यता' के अपराध का दोषी ठहराए गए व्यक्ति को संसद या राज्य विधानमंडल के चुनाव के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाता है।

<https://www.infusionnotes.com/>

सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 17 के तहत अधिकार निजी व्यक्तियों के खिलाफ उपलब्ध है और यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कार्रवाई करना राज्य का संवैधानिक दायित्व है कि इस अधिकार का उल्लंघन न हो।

सोचें! - सबरीमाला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश के संबंध में हाल के मामले में अनुच्छेद 17 कैसे संबंधित और बहस में है?

अनुच्छेद 18 - सैन्य और शैक्षणिक उपाधियों को छोड़कर उपाधियों का उन्मूलन:

अनुच्छेद 18 राज्य को सैन्य और शैक्षणिक भेद को छोड़कर किसी भी उपाधि की पुष्टि करने से रोकता है।

अनुच्छेद 18 भारतीय नागरिकों को किसी भी विदेशी राज्य से उपाधियाँ प्राप्त करने से रोकता है।

अनुच्छेद 18 ने उपाधियों को समाप्त कर दिया और इस संबंध में चार प्रावधान किए हैं:

- यह राज्य को किसी भी व्यक्ति, चाहे वह नागरिक हो या विदेशी, को कोई भी उपाधि (सैन्य या शैक्षणिक भेद को छोड़कर) प्रदान करने से रोकता है।
- यह भारत के एक नागरिक को किसी भी विदेशी राज्य से कोई भी उपाधि स्वीकार करने से रोकता है।
- राज्य के अधीन लाभ या विश्वास का कोई पद धारण करने वाला एक विदेशी राष्ट्रपति की सहमति के बिना किसी भी विदेशी राज्य से कोई भी उपाधि स्वीकार नहीं कर सकता है।
- राज्य के अधीन लाभ या विश्वास का कोई पद धारण करने वाले किसी भी नागरिक या विदेशी को राष्ट्रपति की सहमति के बिना किसी भी विदेशी राज्य से या उसके अधीन कोई उपहार, पारिश्रमिक या पद स्वीकार नहीं करना है।

ध्यान दें: सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रीय पुरस्कारों—भारत रत्न, पद्म विभूषण, पद्म भूषण और पद्म श्री की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा। इसने फैसला सुनाया कि ये पुरस्कार 'उपाधियों' के बराबर नहीं हैं।

अनुच्छेद 19-22: स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद 19 — भाषण आदि की स्वतंत्रता के संबंध में कुछ अधिकारों का संरक्षण:

1. भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार।

भाषण की स्वतंत्रता की रक्षा क्यों करें?

भाषण की स्वतंत्रता एक इंसान को अपनी भावनाओं को दूसरों के सामने व्यक्त करने का अवसर प्रदान करती है,

लेकिन यही एकमात्र कारण नहीं है; उद्देश्य भाषण की स्वतंत्रता की रक्षा करना है। इन आवश्यक स्वतंत्रताओं की रक्षा करने के और भी कारण हो सकते हैं। भाषण की स्वतंत्रता के चार महत्वपूर्ण औचित्य हैं -

- खुली चर्चा द्वारा सत्य की खोज के लिए - इसके अनुसार, यदि भाषण पर प्रतिबंधों को सहन किया जाता है, तो समाज सटीक तथ्यों और मूल्यवान राय के निर्धारण और प्रकाशन को रोकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह सत्य की खोज में सहायता करता है।
- स्वतंत्र भाषण आत्म-पूर्ति और विकास का एक पहलू है - भाषण की स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति के आत्म-विकास और आत्म-पूर्ति के अधिकार का एक अभिन्न पहलू है। जो हम कह और लिख सकते हैं या जो हम सुन और पढ़ सकते हैं उस पर प्रतिबंध हमारी व्यक्तित्व और उसके विकास को बाधित करेगा। यह एक व्यक्ति को आत्म-पूर्ति प्राप्त करने में मदद करता है।
- विश्वास और राजनीतिक दृष्टिकोण व्यक्त करने के लिए - भाषण की स्वतंत्रता किसी के विश्वास को व्यक्त करने और राजनीतिक दृष्टिकोण दिखाने का अवसर प्रदान करती है। इसका अंततः समाज और राज्य के कल्याण में परिणाम होता है। इस प्रकार, भाषण की स्वतंत्रता एक तंत्र प्रदान करती है जिसके द्वारा स्थिरता और सामाजिक परिवर्तन के बीच एक उचित संतुलन स्थापित करना संभव होगा।
- लोकतंत्र में सक्रिय भागीदारी के लिए - लोकतंत्र आज की दुनिया की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है। बोलने की स्वतंत्रता सभी नागरिकों के राजनीतिक मुद्दों को समझने के अधिकार की रक्षा करने के लिए है, ताकि वे लोकतंत्र के सुचारु संचालन में भाग ले सकें। यानी, बोलने की स्वतंत्रता व्यक्ति की निर्णय-निर्माण में भाग लेने की क्षमता को मजबूत करती है। यह स्पष्ट है कि सूचना का अधिकार अनुच्छेद 19 के तहत एक अलग अधिकार के रूप में व्यक्त नहीं किया गया था। हालांकि, अब यह कई मामलों में यह अच्छी तरह से स्थापित हो चुका है कि **अनुच्छेद 19(1)(a)** में निहित बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में सूचना का अधिकार भी शामिल है।

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम राज नारायण, (1975) 4 SCC 428 में यह देखा गया था कि जानने का अधिकार बोलने की स्वतंत्रता के अधिकार से निकला है।

इसे आगे **एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ, 1981** स्प्ल. SCC 87 में पुष्टि की गई, जहां यह निर्णय लिया गया था: "सरकारी कार्यों के बारे में सूचना का खुलासा करना एक खुली सरकार की अवधारणा है, जो बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार में निहित प्रतीत होता है। इसलिए, सरकार के कार्यों के बारे में सूचना का खुलासा सामान्य नियम होना चाहिए और गोपनीयता एक अपवाद होना चाहिए, जिसे केवल सार्वजनिक हित की सख्त आवश्यकता के आधार पर न्यायोचित ठहराया जा सकता है।" इस संदर्भ

में कानून वर्षों में विकसित हुआ है, भारत संघ बनाम लोकतांत्रिक सुधारों के लिए संघ (2002) 5 SCC 294 और पीयूसीएल बनाम भारत संघ (2003) 4 SCC 399 में। इसके साथ ही, संसद ने 2005 में सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया।

2. शांतिपूर्ण और बिना हथियार के सभा करने का अधिकार।

हालांकि यह अधिकार निम्नलिखित प्रतिबंधों के अधीन है:-

- सभा शांतिपूर्ण और सौहार्दपूर्ण होनी चाहिए;
- यह बिना हथियार के होनी चाहिए और लोगों की सुरक्षा को खतरे में नहीं डालनी चाहिए;
- अनुच्छेद 19 के धारा 3 के तहत उचित प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं।

सभा का अधिकार लोकतांत्रिक सरकार के विचार को संजोता है। **अनुच्छेद 19(1)(b)** के तहत यह अधिकार सभाएँ आयोजित करने और जुलूस निकालने का अधिकार शामिल है। हालांकि, यह अधिकार निरंकुश नहीं है बल्कि इसके स्वभाव में प्रतिबंधित है। सभा को अहिंसक होना चाहिए और यह सार्वजनिक शांति का उल्लंघन नहीं करनी चाहिए।

सोचिए! क्या राज्य किसी नागरिक के विरोध करने के अधिकार को प्रतिबंधित कर सकता है?

3. संघटन या यूनियनों या सहकारी समितियों के गठन का अधिकार।

संघटन या यूनियन बनाने का अधिकार बहुत व्यापक और विविध क्षेत्र को कवर करता है, जिसमें सभी प्रकार के संघटन शामिल हैं जैसे राजनीतिक पार्टियाँ, क्लब, समाज, कंपनियाँ, संगठन, उद्यमिता, ट्रेड यूनियन, आदि। कुलकर्णी के मामले में यह निर्णय लिया गया था कि संघ बनाने का अधिकार संगठन की पूर्व-कल्पना करता है। यह इसके सदस्यों के बीच एक संगठन या स्थायी संबंध है, जो सामान्य चिंता के मामलों में होता है। इस प्रकार, इसमें कंपनियाँ, समाज, साझेदारियाँ और ट्रेड यूनियन बनाने का अधिकार भी शामिल है।

ट्रेड यूनियनों को बनाने का अधिकार इस निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाना चाहिए कि ट्रेड यूनियनों के पास प्रभावी **सामूहिक सौदेबाजी** या सामूहिक सौदेबाजी के हिस्से के रूप में या हड़ताल करने का गारंटीकृत अधिकार है। हड़ताल करने या तालाबंदी घोषित करने के अधिकार को विभिन्न औद्योगिक विधानों जैसे औद्योगिक विवाद अधिनियम या ट्रेड यूनियन अधिनियम द्वारा नियंत्रित या प्रतिबंधित किया जा सकता है।

संघ बनाने का अधिकार मान्यता का अधिकार नहीं रखता है। संघ बनाने का अधिकार हड़ताल करने का अधिकार नहीं रखता है। एक संघ बनाने का अधिकार प्रतिद्वंद्वी संघ को सूचित करने का अधिकार नहीं रखता है।

4. भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने का अधिकार।

या जीवन में अतिक्रमण करता है, तो उस उल्लंघन को अनुच्छेद 21 के तहत नहीं माना जाएगा। ऐसे मामलों में पीड़ित व्यक्ति के लिए उपाय अनुच्छेद 226 के तहत या सामान्य कानून के तहत हो सकता है। लेकिन, जब किसी निजी व्यक्ति का कार्य राज्य द्वारा समर्थन प्राप्त होता है और वह दूसरे व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता या जीवन का उल्लंघन करता है, तो वह कार्य निश्चित रूप से अनुच्छेद 21 के तहत आएगा। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर अतिक्रमण या जीवन की हानि को रोकने से संबंधित है।

सुप्रीम कोर्ट ने मेनका केस में अपना निर्णय बाद में आए मामलों में फिर से पुष्टि की है। उसने **अनुच्छेद 21** के तहत निम्नलिखित अधिकारों को घोषित किया है -

- (a) मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार।
- (b) शुद्ध जल और हवा सहित एक अच्छे वातावरण में जीने का अधिकार और खतरनाक उद्योगों से सुरक्षा।
- (c) आजीविका का अधिकार।
- (d) गोपनीयता का अधिकार।
- (e) आश्रय का अधिकार।
- (f) स्वास्थ्य का अधिकार।
- (g) 14 वर्ष की आयु तक मुफ्त शिक्षा का अधिकार।
- (h) मुफ्त कानूनी सहायता का अधिकार।
- (i) एकांत कारावास के खिलाफ अधिकार।
- (j) शीघ्र मुकदमा चलाने का अधिकार।
- (k) हथकड़ी लगाने के खिलाफ अधिकार।
- (l) अमानवीय व्यवहार के खिलाफ अधिकार।
- (m) देर से सजा देने के खिलाफ अधिकार।
- (n) विदेश यात्रा का अधिकार।
- (o) बंधुआ मजदूरी के खिलाफ अधिकार।
- (p) हिरासत में उत्पीड़न के खिलाफ अधिकार।
- (q) आपातकालीन चिकित्सा सहायता का अधिकार।
- (r) सरकारी अस्पताल में समय पर चिकित्सा उपचार का अधिकार।
- (s) राज्य से बाहर नहीं निकाले जाने का अधिकार।
- (t) उचित मुकदमा चलाने का अधिकार।
- (u) बंदियों के जीवन की आवश्यकताओं के लिए अधिकार।
- (v) महिलाओं के साथ गरिमा और शालीनता से पेश आने का अधिकार।
- (w) सार्वजनिक फांसी के खिलाफ अधिकार।
- (x) सुनवाई का अधिकार।
- (y) सूचना का अधिकार।
- (z) प्रतिष्ठा का अधिकार।

अनुच्छेद 21-A — शिक्षा का अधिकार

अनुच्छेद 21-A यह घोषित करता है कि **राज्य 6 से 14 वर्ष की आयु** के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा, जिसे राज्य निर्धारित कर सके। इस प्रकार, यह प्रावधान केवल प्राथमिक शिक्षा को एक मौलिक अधिकार बनाता है, न कि उच्च या व्यावसायिक शिक्षा को।

यह प्रावधान 2002 के **86वें संविधान संशोधन अधिनियम** द्वारा जोड़ा गया था। यह संशोधन देश में **"सभी के लिए शिक्षा"** प्राप्त करने के लक्ष्य में एक महत्वपूर्ण मील का पथर है।

इस संशोधन से पहले भी, संविधान में भाग IV के तहत अनुच्छेद 45 में बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान था। हालांकि, यह एक निर्देशात्मक सिद्धांत था, जिसे अदालतों द्वारा लागू नहीं किया जा सकता था। अब, इस संदर्भ में न्यायिक हस्तक्षेप का अवसर है।

"बालकों का मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार" (RTE) अधिनियम, 2009, जो अनुच्छेद 21-A के तहत अनुमोदित वैधानिकता को प्रदर्शित करता है, का मतलब है कि हर बच्चे को एक औपचारिक स्कूल में पूर्णकालिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, जो कुछ आवश्यक मानकों और मानदंडों को पूरा करता हो।

RTE अधिनियम निम्नलिखित प्रावधान करता है:

बच्चों का पड़ोस के स्कूल में प्राथमिक शिक्षा पूरी होने तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार। यह स्पष्ट करता है कि 'अनिवार्य शिक्षा' का अर्थ उचित सरकार का मुफ्त प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने और छह से चौदह आयु वर्ग के प्रत्येक बच्चे को अनिवार्य प्रवेश, उपस्थिति और प्राथमिक शिक्षा की पूर्णता सुनिश्चित करने का दायित्व है। 'मुफ्त' का अर्थ है कि कोई भी बच्चा किसी भी प्रकार का शुल्क या व्यय देने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा जो उसे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने और पूरी करने से रोक सकता है। यह गैर-प्रवेशित बच्चे के लिए आयु उपयुक्त कक्षा में प्रवेशित होने का प्रावधान करता है।

यह मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने और केंद्र और राज्य सरकारों के बीच वित्तीय और अन्य जिम्मेदारियों को साझा करने में उचित सरकारों, स्थानीय प्राधिकरण और माता-पिता के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को निर्दिष्ट करता है।

यह अन्य बातों के अलावा **छात्र शिक्षक अनुपात (PTR)**, भवनों और बुनियादी ढांचे, स्कूल-कार्य दिवसों, शिक्षक-कार्य घंटों से संबंधित मानदंडों और मानकों को निर्धारित करता है। यह सुनिश्चित करके शिक्षकों की तर्कसंगत तैनाती का प्रावधान करता है कि निर्दिष्ट छात्र-शिक्षक अनुपात प्रत्येक स्कूल के लिए बनाए रखा जाए, न कि केवल राज्य या जिला या ब्लॉक के औसत के रूप में, इस प्रकार यह सुनिश्चित करता है कि शिक्षक पोस्टिंग में कोई शहरी-ग्रामीण असंतुलन न हो। यह गैर-शैक्षिक कार्यों के लिए

शिक्षकों की तैनाती के निषेध का भी प्रावधान करता है, दस वर्षीय जनगणना, स्थानीय प्राधिकरण, राज्य विधानमंडलों और संसद के चुनावों और आपदा राहत को छोड़कर।

यह उचित रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों, यानी आवश्यक प्रवेश और शैक्षणिक योग्यता वाले शिक्षकों की नियुक्ति का प्रावधान करता है।

यह निम्नलिखित को प्रतिबंधित करता है -

- (a) शारीरिक दंड और मानसिक उत्पीड़न;
- (b) बच्चों के प्रवेश के लिए स्क्रीनिंग प्रक्रिया;
- (c) पूंजीकरण शुल्क;
- (d) शिक्षकों द्वारा निजी ट्यूशन;
- (e) बिना मान्यता के स्कूल चलाना।

यह संविधान में निहित मूल्यों के अनुरूप पाठ्यक्रम के विकास का प्रावधान करता है, जो बच्चे के समग्र विकास को सुनिश्चित करेगा, उसके ज्ञान, संभावनाओं और प्रतिभा पर निर्माण करेगा, और एक बच्चे-मित्र और बच्चे-केंद्रित शिक्षण प्रणाली के माध्यम से बच्चे को डर, आघात, और चिंता से मुक्त करेगा।

अनुच्छेद 22: निवारक निरोध:

अनुच्छेद 22 भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण अनुच्छेद है जिसने कई विवादास्पद कानूनों को जन्म दिया है।

इस अनुच्छेद से संबंधित मुद्दा "निवारक निरोध का मुद्दा" है। हमारा उद्देश्य "निवारक निरोध" और संबंधित समकालीन मुद्दों का मूल विचार प्राप्त करना है। भारत के संविधान का अनुच्छेद 22 प्रावधान करता है कि:

- किसी व्यक्ति को ऐसी गिरफ्तारी के आधारों के बारे में सूचित किए बिना गिरफ्तार और हिरासत में नहीं लिया जा सकता है।
- इसका मतलब है कि किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने से पहले, उसे सूचित किया जाना चाहिए कि उसे गिरफ्तार किया जा रहा है और उसे क्यों गिरफ्तार किया जा रहा है।
- गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को अपनी पसंद के कानूनी सलाहकार द्वारा बचाव करने से वंचित नहीं किया जा सकता है।
- इसका मतलब है कि गिरफ्तार व्यक्ति को अपना बचाव करने के लिए एक कानूनी सलाहकार को नियुक्त करने का अधिकार है।
- गिरफ्तार किए गए प्रत्येक व्यक्ति को 24 घंटे के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाएगा।
- हिरासत में लिए गए व्यक्ति की हिरासत मजिस्ट्रेट के अधिकार द्वारा उक्त अवधि से अधिक नहीं हो सकती है।
- अनुच्छेद 22(1) और 22(2) उपरोक्त प्रावधान करते हैं। हालाँकि, अनुच्छेद 22(3) कहता है कि उपरोक्त सुरक्षा उपाय निम्नलिखित के लिए उपलब्ध नहीं हैं:
- यदि व्यक्ति इस समय शत्रु एलियन है।

- यदि व्यक्ति को "निवारक निरोध" के उद्देश्य से बनाए गए कुछ कानून के तहत गिरफ्तार किया जाता है।
- उपरोक्त पहली शर्त उचित है, क्योंकि जब भारत युद्ध में होता है, तो शत्रु देश के नागरिकों को गिरफ्तार किया जा सकता है।

ऐसे खंड को शुरू करने के कारणों को अंबेडकर ने इस प्रकार समझाया:

"यह मानना होगा कि देश की वर्तमान परिस्थितियों में, कार्यपालिका के लिए ऐसे व्यक्ति को हिरासत में लेना आवश्यक हो सकता है जो या तो सार्वजनिक व्यवस्था या देश की रक्षा सेवाओं के साथ छेड़छाड़ कर रहा है। ऐसे मामले में, मुझे नहीं लगता कि व्यक्ति की स्वतंत्रता की तात्कालिकता को राज्य के हितों से ऊपर रखा जाएगा।"

अंबेडकर ने, हालाँकि, **अनुच्छेद 22 (3)** के तहत अनुमत निवारक निरोध की स्पष्ट रूप से पूर्ण शक्ति के कठोरता को कम करने के लिए संविधान में प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों की ओर इशारा किया।

- **सबसे पहले**, निवारक निरोध के प्रत्येक मामले को कानून द्वारा अधिकृत किया जाना चाहिए। यह कार्यपालिका की इच्छा पर नहीं हो सकता है।
- **दूसरे**, निवारक निरोध का कोई भी कानून सामान्यतः किसी व्यक्ति को तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए हिरासत में रखने का अधिकार नहीं देगा।
- **तीसरे**, तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए निवारक निरोध के प्रत्येक मामले को एक सलाहकार बोर्ड के समक्ष रखा जाना चाहिए जिसमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए योग्य व्यक्ति शामिल हों। ऐसे मामलों को तीन महीने की अवधि के भीतर बोर्ड के समक्ष रखा जाना चाहिए।
- **चाँथे**, निवारक निरोध कानून के तहत हिरासत में लिए गए किसी भी व्यक्ति को अनिश्चित काल तक हिरासत में नहीं रखा जा सकता है। हिरासत की हमेशा एक अधिकतम अवधि होगी जिसमें संसद को कानून द्वारा निर्धारित करना आवश्यक है।
- **पाँचवें**, जिन मामलों को सलाहकार बोर्ड के समक्ष रखा जाना आवश्यक है, बोर्ड द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया संसद द्वारा निर्धारित की जाएगी।
- **छठे**, जब किसी व्यक्ति को निवारक निरोध के कानून के तहत हिरासत में लिया जाता है, तो हिरासत में लेने वाले प्राधिकारी उसे उन आधारों से अवगत कराएंगे जिन पर आदेश दिया गया है। इसे उसे आदेश के खिलाफ प्रतिनिधित्व करने का जल्द से जल्द अवसर भी प्रदान करना चाहिए।

अनुच्छेद 23 और 24: शोषण के विरुद्ध अधिकार:

- अनुच्छेद 23 मानव के दुर्व्यापार और बलात् श्रम का निषेध
- अनुच्छेद 23 मानव के दुर्व्यापार और बलात् श्रम जैसे भिखारियों को प्रतिबंधित करता है।

अध्याय - 20

भारतीय संविधान में आपातकालीन प्रावधान

आपातकालीन प्रावधान भारतीय संविधान के भाग 18 में, अनुच्छेद 352 से 360 तक दिए गए हैं। ये प्रावधान केंद्र सरकार को किसी भी असामान्य स्थिति का प्रभावी ढंग से सामना करने का अधिकार प्रदान करते हैं।

आपातकालीन प्रावधान:

भारत में आपातकाल एक ऐसी शासकीय स्थिति को संदर्भित करता है जिसे भारत के राष्ट्रपति द्वारा कुछ संकटपूर्ण परिस्थितियों में घोषित किया जा सकता है। मंत्रिपरिषद् की सलाह पर, राष्ट्रपति संविधान के कई प्रावधानों को अस्वीकार कर सकते हैं, जो भारतीय नागरिकों को मौलिक अधिकारों की गारंटी देते हैं।

भाग 18, अनुच्छेद 352 से 360 - आपातकालीन प्रावधानों को समाहित करते हैं।

‘आपातकाल’ शब्द को एक कठिन परिस्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो अचानक उत्पन्न होती है और जिसे सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा तत्काल कार्यवाही करने की आवश्यकता होती है, और यह कार्यवाही उन्हें संविधान द्वारा विशेष रूप से प्रदत्त शक्ति या अन्यथा आवश्यकता के अनुरूप की जाती है।

आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने के कारण:

- किसी भी असाधारण या खतरे वाली स्थिति का सामना करने के लिए।
- देश की संप्रभुता, एकता, अखंडता और सुरक्षा, लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली और संविधान की रक्षा करने के लिए।
- इसे भारतीय राजनीतिक प्रणाली को देश की स्थिति और आवश्यकताओं के अनुसार संघीय से **एकात्मक (unitary)** में बदलने के लिए शामिल किया गया है।

आपातकाल के दौरान क्या होता है?

- आपातकाल के दौरान केंद्र सरकार सर्वशक्तिमान बन जाती है और राज्य पूरी तरह से केंद्र के नियंत्रण में चले जाते हैं।
- यह संघीय संरचना को बिना संविधान में औपचारिक संशोधन के **एकात्मक (unitary)** संरचना में बदल देती है।
- सामान्य समय में संघीय से लेकर आपातकाल के दौरान एकात्मक राजनीतिक व्यवस्था में इस तरह का परिवर्तन भारतीय संविधान की एक अनूठी विशेषता है।

संविधान तीन प्रकार के आपातकाल को निर्दिष्ट करता है:

- राष्ट्रीय आपातकाल
- राज्य आपातकाल / राष्ट्रपति शासन / संवैधानिक आपातकाल
- वित्तीय आपातकाल

अनुच्छेद 352 - राष्ट्रीय आपातकाल

यह आपातकाल निम्नलिखित कारणों से हो सकता है:

- युद्ध या
- बाहरी आक्रमण या
- सशस्त्र विद्रोह

घोषणा के कारण:

- अनुच्छेद 352 के तहत, राष्ट्रपति तब राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं जब भारत या इसके किसी हिस्से की सुरक्षा युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह द्वारा खतरे में पड़ जाए।
- राष्ट्रपति राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा युद्ध, सशस्त्र विद्रोह या बाहरी आक्रमण के वास्तविक होने से पहले भी कर सकते हैं।
- जब राष्ट्रीय आपातकाल ‘युद्ध’ या ‘बाहरी आक्रमण’ के कारण घोषित किया जाता है, तो उसे ‘बाहरी आपातकाल’ कहा जाता है। वहीं, जब इसे ‘सशस्त्र विद्रोह’ के कारण घोषित किया जाता है, तो इसे ‘आंतरिक आपातकाल’ कहा जाता है।
- यह शब्द ‘सशस्त्र विद्रोह’ 44वें संशोधन से जोड़ा गया था। इससे पहले इसे ‘आंतरिक अशांति’ कहा जाता था। केवल 1975 में, राष्ट्रीय आपातकाल आंतरिक अशांति के कारण घोषित किया गया था।

संसदीय अनुमोदन और अवधि:

- आपातकाल की घोषणा को एक महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए।
- हालांकि, यदि आपातकाल की घोषणा उस समय की जाती है जब लोकसभा का विघटन हो चुका है या यदि एक महीने के भीतर लोकसभा का विघटन हो जाता है और घोषणा को अनुमोदित नहीं किया जाता है, तो यह घोषणा लोकसभा के पुनः गठन के बाद पहले सत्र से 30 दिन तक प्रभावी रहती है, बशर्ते राज्यसभा ने इस दौरान इसे अनुमोदित कर दिया हो।
- यदि दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित किया जाता है, तो आपातकाल 6 महीने तक चलता है और प्रत्येक छह महीने में संसद की मंजूरी से इसे अनिश्चितकाल तक बढ़ाया जा सकता है।
- आपातकाल की घोषणा या इसके निरंतरता को अनुमोदित करने वाला प्रत्येक प्रस्ताव संसद के किसी भी सदन द्वारा विशेष बहुमत से पारित किया जाना चाहिए।

घोषणा का रद्द होना:

- आपातकाल की घोषणा को राष्ट्रपति किसी भी समय एक बाद की घोषणा से रद्द कर सकते हैं। ऐसी घोषणा के लिए संसद की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होती।
- आपातकाल को रद्द कर दिया जाना चाहिए यदि लोकसभा इसे जारी रखने के खिलाफ साधारण बहुमत से प्रस्ताव पारित करती है।

राष्ट्रीय आपातकाल के प्रभाव:

आपातकाल की घोषणा राजनीतिक व्यवस्था पर गंभीर और व्यापक प्रभाव डालती है। इन परिणामों को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है:

केंद्र-राज्य संबंधों पर प्रभाव:

जब आपातकाल की घोषणा प्रभावी होती है, तो केंद्र-राज्य संबंधों का सामान्य ढांचा बुनियादी रूप से बदल जाता है। इसे तीन प्रमुख श्रेणियों में अध्ययन किया जा सकता है

1. कार्यकारी: केंद्र राज्य को 'किसी भी' मामले पर कार्यकारी निर्देश देने का अधिकार प्राप्त करता है।

2. विधायी: संसद राज्य सूची में किसी भी विषय पर कानून बनाने के लिए सक्षम हो जाती है, राष्ट्रपति राज्य विषयों पर भी अध्यादेश जारी कर सकते हैं यदि संसद सत्र में नहीं हो। राज्य विषयों पर संसद द्वारा बनाए गए कानून छह महीने बाद निष्क्रिय हो जाते हैं, जब आपातकाल की स्थिति समाप्त हो जाती है।

3. वित्तीय: राष्ट्रपति केंद्र और राज्यों के बीच राजस्व वितरण में संविधानिक बदलाव कर सकते हैं।

लोकसभा और राज्य विधानसभा के जीवन पर प्रभाव:

- जब राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा प्रभावी होती है, तो लोकसभा का कार्यकाल सामान्य अवधि से एक साल तक बढ़ाया जा सकता है। हालांकि, इस विस्तार को आपातकाल की समाप्ति के बाद छह महीने से अधिक समय तक जारी नहीं रखा जा सकता।
- इसी प्रकार, संसद राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान राज्य विधान सभा के सामान्य कार्यकाल को हर बार एक साल तक बढ़ा सकती है, लेकिन यह विस्तार आपातकाल की समाप्ति के छह महीने बाद से अधिक समय तक नहीं हो सकता।

मौलिक अधिकारों पर प्रभाव:

अनुच्छेद 358 और 359 राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान मौलिक अधिकारों पर प्रभाव को दर्शाते हैं। इन दोनों प्रावधानों को नीचे विस्तार से समझाया गया है:

1. अनुच्छेद 19 के तहत मौलिक अधिकारों का निलंबन:

अनुच्छेद 358 के अनुसार, जब राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा की जाती है, तो अनुच्छेद 19 के तहत छह मौलिक अधिकार स्वचालित रूप से निलंबित हो जाते हैं। आपातकाल की समाप्ति के बाद अनुच्छेद 19 स्वचालित रूप से पुनः सक्रिय हो जाता है। 44वें संशोधन अधिनियम में यह प्रावधान है कि अनुच्छेद 19 को केवल तभी निलंबित किया जा सकता है जब राष्ट्रीय आपातकाल युद्ध या बाहरी आक्रमण के कारण लगाया गया हो, और सशस्त्र विद्रोह के मामले में नहीं।

2. अन्य मौलिक अधिकारों का निलंबन:

अनुच्छेद 359 के तहत, राष्ट्रपति को राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए किसी भी अदालत में जाने के अधिकार को निलंबित करने का

अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार, उपचारात्मक उपाय निलंबित हो जाते हैं, न कि मौलिक अधिकार।

- निलंबन केवल उन मौलिक अधिकारों से संबंधित होता है जो राष्ट्रपति के आदेश में निर्दिष्ट किए गए हैं।
- निलंबन आपातकाल की अवधि तक या उससे कम समय के लिए हो सकता है।
- आदेश को संसद के प्रत्येक सदन के सामने अनुमोदन के लिए रखा जाना चाहिए।

44वें संशोधन अधिनियम के तहत यह अनिवार्य किया गया है कि राष्ट्रपति अनुच्छेद 20 और 21 द्वारा गारंटीकृत मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए अदालत में जाने के अधिकार को निलंबित नहीं कर सकते।

अब तक की घोषणाएं:

अब तक इस प्रकार के आपातकाल की तीन बार घोषणा की गई है- **1962, 1971 और 1975** में।

- पहली राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा अक्टूबर 1962 में चीन के आक्रमण के कारण की गई थी, जो जनवरी 1968 तक प्रभावी रही।
- दूसरी राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा दिसंबर 1971 में पाकिस्तान के आक्रमण के कारण की गई थी।
- जब आपातकाल प्रभावी था, तब तीसरी राष्ट्रीय आपातकाल की घोषणा जून 1975 में की गई थी। दूसरी और तीसरी दोनों घोषणाओं को मार्च 1977 में वापस ले लिया गया।

राष्ट्रपति शासन:

- अनुच्छेद 355 केंद्र** पर यह कर्तव्य डालता है कि वह सुनिश्चित करे कि प्रत्येक राज्य का शासन संविधान के प्रावधानों के अनुसार चलाया जाए।
- यह कर्तव्य वह है जिसके तहत केंद्र राज्य के शासन को अनुच्छेद 356 के तहत लेता है, यदि राज्य में संविधानिक मशीनरी का विफलता हो।
- इसे लोकप्रिय रूप से 'राष्ट्रपति शासन' कहा जाता है।

राष्ट्रपति शासन लागू करने के आधार:

राष्ट्रपति शासन अनुच्छेद 356 के तहत दो आधारों पर घोषित किया जा सकता है:

- अनुच्छेद 356** राष्ट्रपति को यह घोषणा करने का अधिकार देता है कि यदि वह संतुष्ट है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें राज्य का शासन संविधान के प्रावधानों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो वह राष्ट्रपति शासन की घोषणा कर सकते हैं।
- अनुच्छेद 365 कहता है कि जब भी कोई राज्य केंद्र द्वारा दिए गए किसी निर्देश का पालन करने या उसे लागू करने में विफल रहता है, तो राष्ट्रपति के लिए यह घोषित करना वैध होगा कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें राज्य का शासन संविधान के प्रावधानों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता।

संसदीय अनुमोदन और अवधि:

- राष्ट्रपति शासन की घोषणा को जारी किए जाने की तिथि से दो महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए।
- अनुमोदन एक साधारण बहुमत से होता है, यानी उस सदन के उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्य का बहुमत। हालांकि, यदि राष्ट्रपति शासन की घोषणा उस समय की जाती है जब लोकसभा का विघटन हो चुका है या लोकसभा का विघटन दो महीने की अवधि के दौरान बिना अनुमोदन के हो जाता है, तो यह घोषणा लोकसभा के पुनर्गठन के बाद पहली बैठक से 30 दिनों तक प्रभावी रहती है, बशर्ते इस बीच राज्यसभा द्वारा इसे अनुमोदित किया गया हो।
- प्रारंभ में छह महीने के लिए वैध, राष्ट्रपति शासन को संसद की मंजूरी के साथ हर छह महीने में तीन साल तक बढ़ाया जा सकता है।

राष्ट्रपति शासन के परिणाम:

- जब राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू होता है, तो राष्ट्रपति को निम्नलिखित असाधारण शक्तियाँ प्राप्त होती हैं:
- वह राज्य सरकार के कार्यों को और राज्यपाल या राज्य में किसी अन्य कार्यकारी प्राधिकरण को दिए गए अधिकारों को अपने पास ले सकते हैं।
- वह यह घोषित कर सकते हैं कि राज्य विधानमंडल के अधिकारों का प्रयोग संसद द्वारा किया जाएगा।
- वह राज्य में किसी भी संस्था या प्राधिकरण से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों को निलंबित करने सहित अन्य सभी आवश्यक कदम उठा सकते हैं।
- इस शासन के लागू होने पर कोई मंत्रिपरिषद् नहीं होगी।
- न्यायिक समीक्षा का दायरा (Scope of Judicial Review) - 1975 के 38वें संशोधन अधिनियम ने अनुच्छेद 356 का आह्वान करने में राष्ट्रपति की संतुष्टि को अंतिम और निर्णायक बना दिया जिसे किसी भी आधार पर किसी भी अदालत में चुनौती नहीं दी जाएगी।
- लेकिन, इस प्रावधान को बाद में 1978 के 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा हटा दिया गया, जिसका तात्पर्य है कि राष्ट्रपति की संतुष्टि न्यायिक समीक्षा से परे नहीं है।
- जब राज्य सरकार को निलंबित या भंग कर दिया जाता है तो क्या होता है?
- संसद राज्य के लिए कानून बनाने की शक्ति राष्ट्रपति या इस संबंध में उनके द्वारा निर्दिष्ट किसी अन्य प्राधिकरण को सौंप सकती है,
- संसद या प्रत्यायोजन के मामले में, राष्ट्रपति या कोई अन्य निर्दिष्ट प्राधिकरण केंद्र या उसके अधिकारियों और प्राधिकरणों पर शक्तियाँ प्रदान करने और कर्तव्य लगाने वाले कानून बना सकता है,
- राष्ट्रपति अधिकृत कर सकते हैं, जब लोकसभा सत्र में नहीं होती है, तब तक राज्य की संचित निधि से व्यय जब तक कि संसद द्वारा इसकी मंजूरी लंबित न हो, और
- राष्ट्रपति, जब संसद सत्र में नहीं होती है, राज्य के शासन के लिए अध्यादेश जारी कर सकते हैं।

राष्ट्रपति शासन का निरसन:

राष्ट्रपति द्वारा बाद की घोषणा द्वारा ऐसी घोषणा किए जाने के बाद किसी भी समय राष्ट्रपति शासन को रद्द किया जा सकता है। निरसन की घोषणा के लिए संसद द्वारा अनुमोदन की आवश्यकता नहीं होती है।

यह तब होता है जब एक राजनीतिक दल का नेता विधानसभा में उसके लिए बहुमत समर्थन का संकेत देने वाले पत्र प्रस्तुत करता है और राज्य सरकार बनाने का अपना दावा पेश करता है।

क्या आप जानते हैं?

- संसद द्वारा बनाए गए या राष्ट्रपति द्वारा जारी किए गए कानून राष्ट्रपति शासन की समाप्ति के बाद भी वैध हैं।
- राष्ट्रपति शासन के दौरान उच्च न्यायालय की शक्तियाँ बनी रहती हैं।
- राष्ट्रपति शासन का नागरिकों के मौलिक अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
- राष्ट्रपति शासन पहली बार 1951 में पंजाब में लगाया गया था।
- केंद्र-राज्य संबंधों पर सरकारिया आयोग (1988) ने राष्ट्रपति शासन लगाने के संबंध में सिफारिशें प्रस्तुत कीं।

वित्तीय आपातकाल:

- घोषणा के आधार: अनुच्छेद 360 राष्ट्रपति को वित्तीय आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार देता है यदि वह संतुष्ट है कि एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसके कारण भारत या उसके क्षेत्र के किसी भी हिस्से की वित्तीय स्थिरता या साख खतरे में है।
- संसदीय अनुमोदन और अवधि: वित्तीय आपातकाल की घोषणा करने वाली घोषणा को इसके जारी होने की तारीख से दो महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए।
- हालांकि, यदि वित्तीय आपातकाल की घोषणा ऐसे समय में जारी की जाती है जब लोकसभा भंग हो गई हो या घोषणा को मंजूरी दिए बिना दो महीने की अवधि के दौरान लोकसभा का विघटन होता है, तो घोषणा लोकसभा के पुनर्गठन के बाद पहली बैठक से 30 दिनों तक बनी रहती है, बशर्ते राज्यसभा ने इस बीच इसे मंजूरी दे दी हो।
- एक बार संसद के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित किए जाने के बाद, वित्तीय आपातकाल अनिश्चितकाल तक जारी रहता है जब तक इसे निरस्त नहीं किया जाता। वित्तीय आपातकाल को राष्ट्रपति द्वारा किसी उपरांत घोषणा से कभी भी निरस्त किया जा सकता है।

वित्तीय आपातकाल के प्रभाव:

- राज्यों के वित्तीय मामलों पर संघ की कार्यकारी सत्ता का विस्तार।
- राज्य में सेवा करने वाले सभी या किसी भी वर्ग के व्यक्तियों के वेतन और भत्तों में कमी।

अध्याय - 2

लोकतंत्र में सिविल सेवाओं की भूमिका

भारतीय राज्य में तीन प्रमुख शाखाएँ होती हैं - **कार्यपालिका (Executive)**, **विधायिका (Legislature)**, और **न्यायपालिका (Judiciary)**। कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है, जबकि विधायिका जनता के प्रति उत्तरदायी होती है।

यहाँ कार्यपालिका से तात्पर्य है राजनीतिक कार्यपालिका (Political Executive) - अर्थात् मंत्रीगण। राजनीतिक कार्यपालिका स्थायी नहीं होती। भारतीय संदर्भ में, चूँकि लोकसभा और राज्य विधानसभाओं का कार्यकाल केवल 5 वर्षों का होता है, इसलिए हर पाँच वर्षों में राजनीतिक कार्यपालिका में बदलाव की संभावना रहती है।

लेकिन भारत में एक स्थायी कार्यपालिका भी है जिसे **सिविल सेवक (Civil Servants)** कहा जाता है। सिविल सेवक मंत्रीगणों (राजनीतिक कार्यपालिका) के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

लोकतंत्र में सिविल सेवाएँ प्रशासन, नीतियों के निर्माण और क्रियान्वयन, तथा देश को प्रगति और विकास की दिशा में आगे ले जाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। लोकतंत्र एक समानतावादी सिद्धांत है जिसमें जनता उन व्यक्तियों को चुनती है जो उन पर शासन करते हैं। आधुनिक लोकतंत्र के तीन स्तंभ हैं:

1. **विधायिका (Legislature)**
2. **कार्यपालिका (Executive)**
3. **न्यायपालिका (Judiciary)**

सिविल सेवाएँ कार्यपालिका का हिस्सा होती हैं।

- मंत्रीगण (जो कार्यपालिका का हिस्सा हैं) अस्थायी होते हैं और जनता द्वारा अपने मत के आधार पर चुने या बदले जाते हैं।
- लेकिन सिविल सेवक कार्यपालिका का स्थायी हिस्सा होते हैं।
- सिविल सेवक राजनीतिक कार्यपालिका अर्थात् मंत्रीगणों के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
- सिविल सेवाओं के अधिकारी विभिन्न सरकारी विभागों के स्थायी कर्मचारी होते हैं।
- वे मूल रूप से कुशल प्रशासक होते हैं।
- इन्हें कभी-कभी **नौकरशाही (Bureaucracy)** या **लोक सेवा (Public Service)** भी कहा जाता है।

सिविल सेवाओं का ऐतिहासिक विकास

भारत में, संगठित सार्वजनिक प्रशासन प्रणाली की अवधारणा प्राचीन काल से ही विद्यमान है।

- **मौर्य शासन** में सिविल सेवकों को **अध्यक्षों** और अन्य नामों से जाना जाता था।

- **चाणक्य के अर्थशास्त्र** से पता चलता है कि सिविल सेवकों की भर्ती योग्यता और उत्कृष्टता के आधार पर होती थी और उनके चयन की प्रक्रिया कठोर जांच-पड़ताल से गुजरती थी।
- **मुगल काल** में, राज्य के अधिकारी भूमि राजस्व प्रणाली का प्रबंधन करते थे।
- आधुनिक समय में, **ईस्ट इंडिया कंपनी** ने अपनी व्यावसायिक गतिविधियों के संचालन के लिए एक सिविल सेवा प्रणाली विकसित की।

ब्रिटिश शासन में सिविल सेवाओं का विकास

- भारत में ब्रिटिश सरकार ने सिविल सेवाओं की स्थापना मुख्य रूप से भारत पर अपने नियंत्रण को मजबूत करने के उद्देश्य से की थी।
- **1800 में, लॉर्ड वेलेज़ली**, जो 1798 से 1805 तक भारत के गवर्नर-जनरल थे, ने **फोर्ट विलियम कॉलेज** की स्थापना की। कंपनी के हर कर्मचारी को तीन साल के पाठ्यक्रम के लिए यहाँ भेजा जाता था। इसमें अंतरराष्ट्रीय कानून, नैतिकता, भारतीय इतिहास और पूर्वी भाषाएँ आदि पढ़ाई जाती थी।
- **ईस्ट इंडिया कंपनी कॉलेज** लंदन के पास हर्टफोर्डशायर में स्थापित किया गया था, जहाँ सिविल सेवा के सदस्यों को प्रशिक्षण दिया जाता था।
- स्वतंत्रता के बाद, भारत में सिविल सेवा का पुनर्गठन किया गया।
- ब्रिटिश शासन के दौरान, सिविल सेवा अधिकारियों की मुख्य जिम्मेदारियाँ कानून और व्यवस्था बनाए रखना और राजस्व एकत्र करना थी।
- स्वतंत्रता के बाद, जब सरकार ने एक कल्याणकारी राज्य की भूमिका निभानी शुरू की, तो सिविल सेवाओं ने राष्ट्रीय और राज्य कल्याण नीतियों और योजनाबद्ध विकास को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सिविल सेवाओं का महत्व

- **सुदृढ़ एकता:** सिविल सेवा पूरे भारत में मौजूद है और यह देश की एकता को मजबूती प्रदान करती है।
- **नीति निर्माण और विनियमन में भूमिका:** यह प्रभावी नीति निर्माण और नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- **गैर-पक्षपातपूर्ण सलाह:** सिविल सेवा देश के राजनीतिक नेतृत्व को गैर-पक्षपातपूर्ण सलाह देती है, यहाँ तक कि राजनीतिक अस्थिरता के दौरान भी।
- **संस्थागत समन्वय:** यह विभिन्न शासकीय संस्थानों और विभागों के बीच प्रभावी समन्वय प्रदान करती है।
- **प्रशासनिक नेतृत्व:** सिविल सेवा विभिन्न प्रशासनिक स्तरों पर सेवा वितरण और नेतृत्व प्रदान करती है।

सिविल सेवाओं के कार्य

3. **सरकार का आधार:** बिना प्रशासनिक तंत्र के कोई भी सरकार कार्य नहीं कर सकती।
4. **कानून और नीतियों को लागू करना:** सिविल सेवाएँ सरकार द्वारा बनाए गए कानूनों और नीतियों को लागू करने की जिम्मेदारी निभाती हैं।
5. **नीति निर्माण:** सिविल सेवाएँ नीतियों के निर्माण में भी प्रमुख भूमिका निभाती हैं। सिविल सेवा अधिकारी इस संबंध में मंत्रियों को सलाह देते हैं और उन्हें तथ्यों और विचारों से अवगत कराते हैं।
6. **स्थिरता प्रदान करना:** राजनीतिक अस्थिरता के समय में, सिविल सेवा स्थिरता और स्थायित्व प्रदान करती हैं। जहाँ सरकारें और मंत्री बदल सकते हैं, वहीं सिविल सेवाएँ एक स्थायी व्यवस्था के रूप में प्रशासन को स्थिरता और निरंतरता प्रदान करती हैं।

सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक विकास के साधन:

- नीतियों के सफल कार्यान्वयन से आम लोगों के जीवन में सकारात्मक बदलाव आते हैं।
- जब तक वादा किए गए सामान और सेवाएँ लक्षित लाभार्थियों तक नहीं पहुँचतीं, तब तक कोई सरकार किसी योजना को सफल नहीं कह सकती।
- योजनाओं और नीतियों को वास्तविक रूप देने का कार्य सिविल सेवा अधिकारियों पर निर्भर करता है।

कल्याणकारी सेवाएँ:

सिविल सेवाएँ समाज के कमजोर और वंचित वर्गों के कल्याण के लिए विभिन्न योजनाएँ प्रदान करती हैं, जैसे सामाजिक सुरक्षा, वृद्धावस्था पेंशन, गरीबी उन्मूलन आदि।

विकासात्मक कार्य:

सिविल सेवाएँ कई विकासात्मक कार्य करती हैं, जैसे कृषि में आधुनिक तकनीकों को बढ़ावा देना, उद्योग, व्यापार और बैंकिंग को प्रोत्साहित करना, और सभी के लिए डिजिटल तकनीक तक समान पहुँच सुनिश्चित करना।

प्रशासनिक निर्णय:

सिविल सेवाएँ अर्ध-न्यायिक सेवाएँ भी प्रदान करती हैं, जैसे राज्य और नागरिकों के बीच विवादों का समाधान, ट्रिब्यूनल आदि के रूप में।

सिविल सेवाओं से संबंधित संवैधानिक प्रावधान:

- **अनुच्छेद 53 और 154:** संघ और राज्यों की कार्यकारी शक्तियाँ राष्ट्रपति या राज्यपाल में निहित होती हैं, जो सीधे या उनके अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से कार्य करती हैं। ये अधिकारी स्थायी सिविल सेवा का हिस्सा होते हैं और संविधान के भाग XIV (संघ और राज्यों के अधीन सेवाएँ, अनुच्छेद 308-323) द्वारा शासित होते हैं।
- **भारत सरकार (कारोबार का संचालन) नियम:** इन नियमों के माध्यम से अधिकारियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे राष्ट्रपति या राज्यपाल को उनकी कार्यकारी शक्तियों का उपयोग करने में कैसे सहायता करें।

- **अनुच्छेद 311:** संघ या राज्य के तहत नागरिक क्षमताओं में कार्यरत व्यक्तियों की बर्खास्तगी, हटाने या पदावनति।
- **अनुच्छेद 312:** अखिल भारतीय सेवाएँ।
- **भारत सरकार (कारोबार का आवंटन) नियम:** इन नियमों के अनुसार, मंत्रियों के बीच कार्य का विभाजन किया जाता है।
- **अनुच्छेद 308:** राज्य की परिभाषा।
- **अनुच्छेद 310:** संघ या राज्य के तहत कार्यरत व्यक्तियों के पद का कार्यकाल।
- **अनुच्छेद 313:** संक्रमणकालीन प्रावधान।

सिविल सेवकों की जवाबदेही:

- सिविल सेवक उन विभागों के मंत्रियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं जिनमें वे कार्यरत होते हैं।
- मंत्री संसद या राज्य विधानसभाओं के माध्यम से जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं, और सिविल सेवक मंत्रियों के प्रति।
- सिविल सेवकों को आदर्श रूप उस समय की निर्वाचित सरकार की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि सरकारी नीतियाँ सिविल सेवाओं के कार्यों का हिस्सा होती हैं।
- लेकिन एक निष्पक्ष सिविल सेवक संविधान के प्रति भी उत्तरदायी होता है, जिस पर उसने निष्ठा की शपथ ली होती है।

प्रमुख बिंदु:

1. लोकतंत्र में मंत्री संसद के माध्यम से जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं, इसलिए सिविल सेवकों को मंत्री के प्रति जवाबदेह होना पड़ता है।
2. एक निष्पक्ष सिविल सेवा न केवल दिन की सरकार के प्रति, बल्कि उस संविधान के प्रति भी उत्तरदायी होती है, जिसके प्रति उन्होंने निष्ठा की शपथ ली है।
3. निर्वाचित सरकार की नीतियों को लागू करना सिविल सेवकों का मुख्य कार्य है।
4. सिविल सेवकों (जैसे: सचिव) को राजनीतिक कार्यकारिणी (मंत्रियों) को सलाह देने का संवैधानिक अधिकार प्राप्त है।

आज सिविल सेवाओं को प्रभावित करने वाली समस्याएँ:

- व्यावसायिकता की कमी और खराब क्षमता निर्माण।
- एक अप्रभावी प्रोत्साहन प्रणाली जो मेधावी और ईमानदार सिविल सेवकों को पुरस्कृत नहीं करती है।
- कठोर और पुराने नियम और प्रक्रियाएँ जो सिविल सेवकों को व्यक्तिगत निर्णय लेने और कुशलतापूर्वक प्रदर्शन करने की अनुमति नहीं देती हैं।
- जवाबदेही और पारदर्शिता प्रक्रिया की कमी, व्हिसल-ब्लोअर के लिए पर्याप्त सुरक्षा के बिना।
- राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण मनमानी स्थानान्तरण, और कार्यकाल में असुरक्षा।
- नैतिकता और मूल्यों में क्षरण, जिसके कारण व्यापक भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद हुआ है।

Dear Aspirants, here are the our results in differents exams

(Proof Video Link) ↓

RAS PRE. 2021 - <https://shorturl.at/qBJ18> (74 प्रश्न , 150 में से)

RAS Pre 2023 - <https://shorturl.at/tGHRT> (96 प्रश्न , 150 में से)

UP Police Constable 2024 - <http://surl.li/rbfyn> (98 प्रश्न , 150 में से)

Rajasthan CET Gradu. Level - <https://youtu.be/gPqDNlc6UR0>

Rajasthan CET 12th Level - <https://youtu.be/oCa-CoTFu4A>

RPSC EO / RO - <https://youtu.be/b9PKjl4nSxE>

VDO PRE. - <https://www.youtube.com/watch?v=gXdAk856Wl8&t=202s>

Patwari - <https://www.youtube.com/watch?v=X6mKGdtXyu4&t=2s>

PTI 3rd grade - https://www.youtube.com/watch?v=iA_MemKKgEk&t=5s

SSC GD - 2021 - <https://youtu.be/2gz2fJyt6vI>

EXAM (परीक्षा)	DATE	हमारे नोट्स में से आये हुए प्रश्नों की संख्या
MPPSC Prelims 2023	17 दिसम्बर	63 प्रश्न (100 में से)
RAS PRE. 2021	27 अक्तूबर	74 प्रश्न आये
RAS Mains 2021	October 2021	52% प्रश्न आये

whatsapp <https://wa.link/6bx90g> 1 web.- <https://shorturl.at/5gSVX>

RAS Pre. 2023	01 अक्टूबर 2023	96 प्रश्न (150 में से)
SSC GD 2021	16 नवम्बर	68 (100 में से)
SSC GD 2021	08 दिसम्बर	67 (100 में से)
RPSC EO/RO	14 मई (1st Shift)	95 (120 में से)
राजस्थान S.I. 2021	14 सितम्बर	119 (200 में से)
राजस्थान S.I. 2021	15 सितम्बर	126 (200 में से)
RAJASTHAN PATWARI 2021	23 अक्टूबर (1st शिफ्ट)	79 (150 में से)
RAJASTHAN PATWARI 2021	23 अक्टूबर (2 nd शिफ्ट)	103 (150 में से)
RAJASTHAN PATWARI 2021	24 अक्टूबर (2 nd शिफ्ट)	91 (150 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	27 दिसम्बर (1 st शिफ्ट)	59 (100 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	27 दिसम्बर (2 nd शिफ्ट)	61 (100 में से)
RAJASTHAN VDO 2021	28 दिसम्बर (2 nd शिफ्ट)	57 (100 में से)
U.P. SI 2021	14 नवम्बर 2021 1 st शिफ्ट	91 (160 में से)
U.P. SI 2021	21 नवम्बर 2021 (1 st शिफ्ट)	89 (160 में से)
Raj. CET Graduation level	07 January 2023 (1 st शिफ्ट)	96 (150 में से)
Raj. CET 12th level	04 February 2023 (1 st शिफ्ट)	98 (150 में से)
UP Police Constable	17 February 2024 (1 st शिफ्ट)	98 (150 में से)

& Many More Exams like UPSC, SSC, Bank Etc.

whatsapp <https://wa.link/6bx90g> 2 web.- <https://shorturl.at/5gSVX>